नं० ५४२६—घ
महाभारते शान्तिपर्वणि राजधर्मनिरूपणम् (राजनीतिशास्त्रम्)
पत्राणि ५२ (सम्पूर्णम्)

नं० १२

नं० ५३२६ ना० क

राजधर्म

पत्राणि ५१ नीतिशास्त्र

भारते शान्तिपर्वणि राज[illegible]मनिरूपणं
सं० प० ५१

श्री·
रा· ध·
टी·
१

ॐस्वस्तिश्रीगणेशायनमः ॐश्रीगुरुचरणकमलपराग·
शुनेभ्योनमः श्रीविद्याभगवत्यैनमः अथश्रीमहाभार
तेशांतिपर्ववार्तिकंप्रारभ्यते तत्रादौराजधर्मोउच्यते
योह्यायंताप्रवक्तापि पुरुषार्थचतुष्कदः विद्यापत्रगु
मद्रूणं कृस्नोद्यान्मतिशुभां १ वर्णाश्रमयुगानांच
धर्माराजनयाश्रिताः इतिहेतोराजधर्मे भाषावार्तिक
मारभे १ अनयोरर्थः महाभारतनामवाले इतिहास
विषें कृस्नत्रय वर्णन कियाहै एक अर्जुनका कृस्नना
महै सोतो नरका अवतारहै सोजीवात्माहै अपनी अ
ज्ञता कर्के युद्धकरताहै उसकी अज्ञताको निवृत्त क
रणेहारा कृस्नभगवानहै सो उसके सारथीभयेहै जै
से सारथी रथीको खोटेमार्गसे फेरकर्के ज्ञानमार्गमें
प्रवृत्त करणे हारेहै तीसरा कृस्ननाम वेदव्यासजीका
है सो व्यासजी वर्णाश्रम धर्मके वक्ताहै जिन्होने वेदों
का शाखा विभागकर्के पुराण धर्मशास्त्रकरेहै यह
तीन प्रकारके कृस्नभगवानजोहै सो राजधर्मकर्के
विश्वकी पालनाको और आपदाकी निवृत्तिको और
मुमुक्षू जनोंकी मुक्तिको करतेहै तीने उत्तम अधिका
रीको धर्म अर्थ काम मोक्षरूपी चार पुरुषार्थको सिद्ध
करदेतेहैं सोई तीनरूपवाले कृस्नभगवानजी हमलो
कोको शुभकर्म करणेहारी बुद्धिको देवे १ प्रथमतो
राजधर्मके प्रयोजनको कहतेहैं चारवर्णोंके और चा
रआश्रमोंके और चारयुगोंके जो चतुर्वेद प्रणीतधर्म
है सो सभही राजधर्मको आश्रितहै राजाकी रक्षावि
ना धर्मलोप होताहै राजदंडके भयकर्के सर्वधर्मोंकी
स्थिती होतीहै इसी हेतूसे प्रथम राजधर्मको वर्ण
न करतेहैं २ अबमहाभारत शास्त्रके प्रयोजनको
टीकाकार कहतेहैं यन्मायनेपुरुषार्थ मितिहासीय
मीरितः धर्मार्थकाममोक्षाख्ये सम्यगत्रनिरूपिताः ३

यह महाभारत नामवाला इतिहास जिह्नो साधनोको रुचि
वाले कहाहै सो जो धर्म काम मोक्षरूपी चारपुरुषार्थ है
सो इस भारतशास्त्रके आदि पर्वसे स्त्रीपर्वपर्यंत सम्यक्
प्रकारसे कहेहै १ बहुड टीकाकार इसविषे शुभ अशुभ
अधिकार भेदको कहतेहैं धर्मादि त्रयमध्ये काम कारण
प्रीत्यर्थ मित्यल्पकाः धीशुद्धिकृत जीवनार्थकतया अक्षा
र्थमित्युत्तमाः एतत्पांडवधार्तराष्ट्रचरित व्याख्यामिषाद्दर्शि
ते येनासौ निजवाक्यजातहृदयं मत्स्येदरानादरात् ध
इहां भोगवांछाकी निवृत्तिवाले प्रथम अधम अधिकारी
की निंदाकरीहै अल्पबुद्धि योजनहै सो कहतेहै धर्मसे
अर्थहोताहै अर्थसे कामभोग प्राप्तिहोतीहै कामभोग
से इंद्रियोंकी तृप्तिहोतीहै ताते स्वर्गादि अवेद भोग सुख
वाले धर्मादि तीनो कर्तव्य कहेहै यह दुर्योधनादि धृतरा
ष्ट्रके पुत्रोंका चरित्र कहाहै और जौनसे उत्तम अधिकारी
है सो अंतकरण शुद्धिवाले धर्म कर्म करतेहै और प्राण
धारणवाले अर्थकी वांछाको करतेहै और यज्ञादि देव
कर्मके वाले अन्नादिभोगमात्र कामभोगकी वांछावाले
है इसप्रकार पांडवोंके चरित्रकी व्याख्याकीनीहै और धृ
तराष्ट्रके पुत्रोंके चरित्रकीभी व्याख्याकीनीहै इसीदारकेके
अपने वचन समूहके अर्थको जिह्नोने सूचन कियाहै सो
भगवान् कृष्णद्वैपायन व्यासजी अपने वचन समूहके अभि
प्रायको कृपाआदरसे मेरे ताईभी देवें ध तत्रादौ शांतिपर्व
विषे राजधर्म आपद्धर्म मोक्षधर्म नामवाले तीनकांड है
सो तीनोही क्रमकर्के तीनोंके उपकारीहै राजधर्मजोहै
सो सर्व विश्वके प्राणीगणको रक्षाकर्के उपकारकारीहै
और आपद्धर्मजोहै सो अपदाग्रस्त प्राणीको उपकारका
रीहै और मोक्षधर्मजोहै सो संसारदुःखसे विरक्तपुरुष
का उपकारकारीहै जौनसाधर्म सर्वविश्वको उपकारक
है सो राजधर्म परमश्रेष्ठहै ऐसे राजधर्मकी प्रशंसावाले
प्रथमराजाके कर्मको और अर्थको कहतेहैं राजाजोहै सो
रक्षपालन कर्के संपूर्ण प्रजाको सुखदेनेसे रंजन करता
है अपनेविषे प्रीति करावताहै इसहेतुसे सत्रुप्रजापनो

नेभी कहाहै अब हमन्रपतीके धर्मको कहतेहै नरोंको यथा
विधी दंडकर्के औरपालनकर्के रक्षाकरताहै सो राजाकहाहै
जो राजाहोकर सर्वधर्मोको संरक्षण प्रजामे यथाविधीकरावे
सोभामे क्षत्रियजाती होवे भामे ब्राह्मण वैश्यादि अवर जाती
होवे काम लोभादिरहित होकर केवल प्रजापालनमात्र अ
पने मुख्यधर्मको माने सोई राज्यकरणका अधिकारीहै उ
सीवास्ते राजधर्मोका व्याख्यानहै इसविषे राजायुधिष्ठिर·
की कथाकी उदाहरण कहतेहै प्रथम पौराणिक संप्रदा·
यके मंगलाचरणको कहतेहै औजो पुरुष जयनामवाले
इतिहास वेदशास्त्रपुराणकथाको पाठ परायण ग्रंथ पराय
णको प्रारंभकिया चाहताहै सो प्रथम सर्वभूतोके अंतर्या
मी जलशायी नारायणभगवानको परायणसमाप्तिकी नि
र्विघ्नतावास्ते और फलकी अविच्छिन्नतावास्ते प्रणाम करलेवे
ॐनारायणं नमस्कृत्य नरंचैव नरोत्तमं देवी स
रस्वती व्यासं ततोजय मुदीरयेत् १
और जौनसानर उसको आराधना करताहै और जौनसा उत्त
मनर उपासनाके संप्रदायको उपदेशाकरे सो उत्तम सनर
हहै तिन दोनोको प्रणाम करलेवे वहउवाणीको प्रवृत्त
करणेहारी सरस्वती देवीको प्रणाम करलेवे वहउ वेद
शास्त्र पुराणके वक्ताजो व्यासजी तिनको प्रणामकर्के ग्रंथ
परायणके संप्रदायपरिपाटीको जानकर्के प्रारंभकाकरे सो
ग्रंथका परायण सर्वप्रकारकर्के जयकारी होताहै १
वैशंपायनउवाच कृतोदकास्ते सुहृदां सर्वेषां पांडु
नंदनाः विदुरो धृतराष्ट्रश्च सर्वाश्च भरतस्त्रियः २
वैशंपायनउवाच वैशंपायन मुनि व्यासजीके शिष्यहै सो
राजा जनमेजयको कथाकहतेभये कृतोदकाइति हेराजन
जनमेजय महाभारतके युद्धभये उपरंत पांचो पांडव और वि
दुर और धृतराष्ट्र राजा और भरतवंशीयोंकी स्त्रीयाजोहै सो
सभही अपने जो संबंधीहै पुत्र भ्राता पती तिन्होके देहसंस्का
रकर्के सभही जलकर्के प्रेत तर्पणको करतेभये मरणान

वैरहोताहै तातेपांडवजोहै सो दुर्योधनादि अपने शत्रुग
णोकोभी अपनेभ्राता जानकर्के जलतर्पणादि प्रेतक्रिया
को विधीसे करतेभये २

ततस्तेस्म महात्मानो न्यवसन् पांडुनंदनाः शौचं
निवर्तयिष्यंतो मासमात्रं पुराद्बहिः ३

ततेइति तबका हस्तिना पुरके बाहिर गंगातीरविषे स
र्वेपरिवार संयुक्त पांडव जोहै सो अशौचदिनोंको बिताते
वाहतेहै एकमासभर नगरसे बाहिरही निवास करतेभये
हे राजन् पांडव औरसभही कुरुवंशी क्षत्रीलोकहै उनको शू
द्रके समान मासभर अशौचनहीहै और योधा जोरणविषे
मरजाताहो उसकी तत्कालही शुद्धिहोतीहै ताते उनको
मासमात्र अशौचनहीहै परंतु सौप्तिक पर्वविषे जो रात्रिवि
षे पशुके समान मरेहै उनका अशौच द्वादश दिनमात्र ब
नाहे और अष्टादशदिन युद्धकालके भयेहै इसकारणसे
मासभर अशौच कहाहै ३

कृतोदकेन राज्ञा तु धर्मराजे युधिष्ठिरं अभिज-
ग्मुः महात्मानः सिद्धा ब्रह्मर्षि सत्तमाः ४

कृतोदकमिति जब राजा युधिष्ठिर प्रेतोके जलतर्पण
को करचुका तब धर्मराज युधिष्ठिरको बुलावनेको सि
द्धलोक और महात्मा श्रेष्ठ ब्रह्मऋषि आनप्राप्त होतेभयेहै ४

द्वैपायनो नारदश्च देवलश्च महाऋषिः देवस्थान
श्च कण्वश्च तेषां शिष्याश्च सत्तमाः ४

तिन्हको नामसंज्ञाकर्के कहतेहै प्रथम तो व्यासजी और
नारद और देवल महाऋषि और देवस्थानमुनि और कण्व
मुनि इत्यादि सभ ऋषिगण आवतेभये और तिन्होके उ
त्तम उत्तम शिष्यभी आवते भये ५

अन्येव वेद विद्वांसः कृतप्रज्ञाः द्विजातयः गृहस्था :
स्नातकाः सर्वे ददृशुः कुरुसत्तम ५

इन्हसे भिन्न औरभी वेदवेत्ता शास्त्रज्ञानकी बुद्धिवाले पंडि
त ब्राह्मण गृहस्थलोक और ब्रह्मचारी लोक जोजो श्रेष्ठ-

श्री॰ महात्मा संतलोक तीर्थोविषे आश्रमोविषे मुख्यरहे सो
शा॰ प॰ सभही कुरुराजको आइकर देखतेभये ६
टी॰ तेभिगम्य महात्मानः पूजिताश्च महीक्षिपि आस
३ नेषु महार्हेषु विविशुस्ते महर्षयः ७
3 जो जो अपने समीप आन प्राप्तभये सो सभही राजाने
आगे आपजाइ करके यथाविधि पूजितकिये तब सभही
महाऋषि उत्तम आसनोविषे बैठजाते भये ७
प्रतिगृह्य ततः पूजां तत्काल सदृशीं तदा पर्युपा
स न्यथान्यायं परिवार्य युधिष्ठिरम् ८
सो सभही मुनिलोक उसकाल विषे उचितराजासे पू॰
जाको ग्रहण कर्के तत्कालहि राजाके चारोंतरफ यथा
विधि बैठजाते भये ८
पुण्ये भागीरथ्ये तीरे शोक व्याकुल चेतसं आश्वा
सयंतो राजेंद्र विप्राः शत सहस्रशः ९
राजायुधिष्ठिर जोहै सो जेष्ठ शोककर्के व्याकुल चित्तभ
याहै उसको गंगातीरविषे शतसहस्र अनेक मुनि वि
प्रगण आश्वासन करते भये ९
नारदस्त्व ब्रवीत्काले धर्मपुत्रं युधिष्ठिरं संभाष्य
मुनिभिः सार्धं कृष्ण द्वैपायना दिभिः १०
हेराजन् जनमेजय उसकालविषे प्रथमतो नारदमुनि
जोहै सो व्यासादि महामुनि गणोके साथ प्रसंगवार्ता
कर्के धर्मराज जो युधिष्ठिर तिसको वचन कहताभया १०
भवतो बाहु वीर्येण प्रसादान्माधवस्य च जितेय
मवनिः कृत्स्ना धर्मेणैव युधिष्ठिर ११
नारदउवाच हेराजन् यहसमस्त पृथ्वी तुमारी जयसे
एवं धर्मकर्के व्याप्तभईरही अब तुमने अपने भुजा ब
ल कर्के और कृष्णभगवानके प्रसादसे सभही जीतलीनी
है सो तुम्हारे धर्मकर्के सभ धर्मयुक्तही भईहै ११
दिष्ट्या मुक्तस्तु संग्रामा दस्माल्लोक भयंकरात् क्षा
त्रधर्म रतश्चापि कच्चिन्मोदसि पांडव १२

कच्चिन्न विहतामित्रः प्रीणासि सुहृदोनघ कच्चि
च्छ्रियं मिमं प्राप्य नत्वांशोकः प्रबाधते १४
यह संग्राम सर्वजनोंको महाभयकारी भयाहै इस संग्राम
से आपजीवते छूटगयेहो यह हमको महाआनंद भयाहै
और तुम अपने क्षत्रधर्मविषे रत भयेहो यहभी परमआनं
दहै हम तुमको यह कुशल प्रश्न करतेहै अब प्रमोदको
प्राप्तभयेहो कुछ औरभी इछाकरतेहै तुमशत्रुकरणेको
मारणकरके इहसंबंधीजनोंको प्रसन्नकरतेहो वहुरि ऐसी
विजय संपदाको पाइकर तुमको शोकवाधाको नहीकर
ताहै हम तुम्हारी विशोकताको इछाकरतेहै १४
युधिष्ठिरउवाच विजितेयं महीकृत्स्ना कृष्णबाहुब
लाश्रयात् ब्राह्मणानां प्रसादेन भीमार्जुन बलेनच १२
युधिष्ठिरउवाच हेभगवन्नारदजी यह संपूर्ण पृथिवी हमने
कृष्णजीके बाहुबलकरके जीतलईहै ब्राह्मणोंके प्रसादक
रके जीतीहै और भीम अर्जुनके बाहुबलकरके जीतीहै १५
इदंतुमे महादुःखं वर्तते हृदि नित्यदा कृत्वा ज्ञा
तिक्षय मिमं महांतं लोभकारितं १६
परंतु यह महादुःख मेरे हृदयमो सदावर्तमानहै हमने
यहविजय महाघोर अपनी जातीके संबंधीजनोंके वधकरके
प्राप्तभयाहै यह अपने कुलकाक्षय हमसे महालोभने कर
वायाहै १६
सौभद्रं द्रौपदेयांश्च घातयित्वा सुतान्प्रियान् जयो
य मजयाकारो भगवन्प्रतिभातिमे १७
इसवास्ते हमने सुभद्राके पुत्रको अभिमन्युको मरवाय दि
याहै इसीकरके और अतिप्रेमवाले पुत्रादिक मरवायकरके
यह हमारेको अपना जय पराजय जैसा भासताहै १७
किंतु वक्ष्यति वार्ष्णेयी वधूर्मे मधुसूदनं द्वारका
वासिनी कृष्ण मितः प्रतिगतं हरिं १८
और मै क्या कहूं मेरे कनिष्ठभ्राताकी वधूजो सुभद्राहै सो
अपने भ्राताको श्रीकृष्णको क्या कहेगी जेने ईसापुहोकर
मेरेपुत्र अभिमन्युको अपने भानजाको कैसे रणमें अपने

श्री
ए. प.
टी.
५

निकट मरवायाहै वहुड जव कृस्नजीको द्वारकावासी लो
क का कहैगे तैने अपनी भगिनीके पुत्रको मरवाय करकै
रहा अव कैसे आनदिखायाहै १८
द्रौपदी हतपुत्रेयं कृपणा हत बांधवा अस्मत्प्रि
यहिते युक्ता भूयः पीडयती वमां १९
वहुड ओरभी तमसुनो यह द्रौपदी हतपुत्राहै अति शोक
से दीन भईहै इसके भ्राता पिताभी मारेगयेहै ओर यह ह
मारे हितविषे नित्यही प्रयोग करणे हारीहै अव शोक
आकुलता करकै मोको अतिपीडाको करतीहै १९
इद मनस्च भगव न्यत्तो वदामि नारद मेत्र संव
रणेनास्ति कुंत्या दुःखेन योजितः २०
हे मुने अवमें अपने मनके दुःखको कहताहूं कुंतीने अ
पना शूफमंत्र प्रकट कियाहै उस करके मोको अतिदुःख
करके युक्त कियाहै २०
यस्य नागा युतवलो लोके प्रतिरथो रणे सिंह
खेल गति र्धीमान् दृणी दाता यतव्रतः २१
कौनसा हमारे युद्धविषे कर्ण महारथी रहा सो अयुत
हस्तीके समान वलवान रहा ओर इसलोकविषे रणमो
जिसके सन्मुख कोई महारथी नही होताहै ओर सिंहके
समान जिसकी भयरहित मदगतिहै ओर महाचतुर जि
सकी वुद्धिहै ओर महादाता होताभया ओर यतीव्रतवाला
होता भया २१
आश्रयो धार्तराष्ट्राणां मानी तीक्ष्ण पराक्रमः अ
मर्षी नित्य संरंभी तेमास्माकं रणे रणे २२
ओर धृतराष्ट्रके जो पुत्रहै दुर्योधनादिक उन्हको जिस्का
वडा आश्रय वनारहा ओर वडामानीरहा ओर उग्रपराक्र
मवाला रहा ओर हठकोधीरहा ओर नित्यही पराये उत्क
र्षको नहीसहारे वहुड जहां जहां रणहोवे तहां तहां ह
मारेको पराक्रमकरकै हरकरणे हारारहा २२
योद्धास्य विदुयो धीव कृतीवाहुत विक्रमः शूद्रो
त्पन्नः सतः कुंत्या भ्रातास्माक मसौ किल २३

वहुर कैसाहोताभया अस्त्रविषे शीघ्रकारी होताभया वहुर
नानाप्रकारके विचित्र करणेहाराहो और अतिकुशलयोधा हो
ताभया और अतिअद्भुत पराक्रम जिसकाहै ऐसा कर्णजोहै
सो कुंतीका गुप्तउत्पतिवाला पुत्रभयारहा सो हमारा निश्च
यकरकै ज्येष्ठभ्राता होताभया २३
तोय कर्मणि नः कुंती कथयामास सूर्यजं पुत्रं स-
र्वगुणोपेतं अवकीर्णे जलेपुरा २४
जिसको जलांजलि दानके समयविषे कहतीभई यह जो क
र्णके सोमैने सूर्यसे उत्पन्न कियाहै यह तुमारा ज्येष्ठभ्राताहै
इसकोभीतुम जलदानकरो कुंतीने अपना पुत्र कर्णसे प्रथम
जिसको जलविषे प्रवाह कियाहै और काष्ठकी मंजूषाविषे स्थि
तकरके गंगाप्रवाहविषे डुबाइदियाहै २४
मंजूषायां समाधाय गंगास्रोतस्य मज्जयत् यं सूत
पुत्रं लोकोयं राधेयं चाभ्यमन्यत सज्येष्ठपुत्रः कुंत्या
वै भ्रातास्माकं च मातृतः २५
जिसको लोक सूतपुत्र कहतेहै और राधासुतकोभी मानतेहै
सो कुंतीका ज्येष्ठपुत्रहै हमारी मातासे उत्पन्न भयाहै कुंतीका
ज्येष्ठपुत्र हमाराभ्राताहै २५
अजानता मयाभ्राता राज्यलुब्धेन घातितः तन्मे द
हति गात्राणि तूलराशि मिवानलः २६
उसको अपना भ्राता नहीजाना राज्यलोभ करकै हमने आपही
माराहै यह संताप हमारे अंगोको दाहकरताहै जैसे रुईके
पर्वतको अग्निदाह करताहै २६
नहितं वेद पार्थोपि भ्रातरं श्वेतवाहनः नाहं नभीमो
नयमौ सत्वस्मान्वेद सुव्रतः
ऐसे कर्णको अर्जुनभी नही जानता जिस अर्जुनके श्वेततुरंग
है और भीमसेनभी नहीजानता और नकुल सहदेवभी अपना
भ्राता नहीजानते सो तो हमको अपने भ्राता जानता भया
गताकिल पृथा तस्य सकाशमिति नः श्रुतं अस्माकं
शम कामा वै त्वंपुत्रो ममेत्यथ २७
हमने पश्चात् सुनाहै कुंती उसकेपास जातुरगयेहै हमारेसाथ
वैरकी शांतिको वांछाकरतेभई है कर्ण मै तेरी माताहै तू

श्री· मेरा पुत्र है वैरको त्यागकर २७
ए· प· इत्यायाः न कृतं कामं तेन वापि महात्मना तथ्य प
टी· थ्या हिते मातर्यदुवाच हितं नः श्रुतं २८
५ कर्णने कुंतीकी कामना नहीं कीनी तब हमारे माताको पीछे
कर्णने ऐसा वचन कहा सो हमनेभी श्रवण कियाहै २८
5 नहि शक्ता म्यहं मातस्त्यक्तुं दुर्योधनं रणे अनार्यता
नृशंसत्वं कृतघ्नत्वं हि मे भवेत् २९
हेमाता मे दुर्योधन राजाको रणकालविषे नहीं त्याग करसक
ता त्यागकर्के मेरेविषे तुच्छता होतीहै खोटाई होतीहै कातर
ताहोतीहै निर्दयताहोतीहै और कृतघ्नताभी होतीहै २९
युधिष्ठिरेण संधिं हि यदि कुर्यां मतेन ते भीतोरणे
श्वेतवाहा दिति मां मंस्यते जनः ३०
और हेतूभी श्रवण कर जो मैं तेरे मतकर्के युधिष्ठिरसे संधिक
रौ तौ मोको लोक कहेंगे कर्ण अर्जुनसे भयभीत भयाहै ३०
सोहं विनिहत्य समरे विजयं सह केशवं सधास्ये धर्म
पुत्रेण पश्चादिति च सोब्रवीत ३१
तातें योतरसा मैं दुर्योधनका मित्र भयाहूं सोई मैं अर्जुनको कु
ष्णसमेत जीतकर्के पश्चात् धर्मपुत्रके साथ संधानकरौंगा ऐ
से कर्ण तब कहता भया ३१
तमुवाच किलपृथा पुनः पृथुलवक्षसं चतुर्णां मे
भयं देहि कामं पुत्राणां फाल्गुणं ३२
तब कुंती विशालहृदयवाले कर्णको बहुर वचन कहती भई
हेकर्ण जोतू अर्जुनके साथ वैर त्यागकरता नो अर्जुनसे भि
न्नेजो चारमेरेपुत्र तिनके अभय दानको मेरेप्रति देवो अर्जु
नके साथ अपने इच्छासे युद्धकर ३२
सोब्रवीन्मातरं धीमान्वेपमानां कृतांजलिः प्राप्ता
न्विषह्यापि सततो न हनिष्यामि ते सुतान् ३३
हे भगवन् सो कर्ण बहुर माताको वचन कहताभया माता
कैसीहै भयभीततासे कंपमानसे और अंजली बांधकर्के स्थि
तहै हेमाता तोते रेचारपुत्र रणविषे अतिकष्टको प्राप्तहोवेंगे
तौ इनको नहीं मारोंगा ३३
पंचैव हि सुतादेवि भविष्यंति तव ध्रुवाः सार्जुना

वाहते कर्णे सकर्णा वाहतेर्जुने २४
हे देवि तेरे सदा पांचोपुत्र बनेरहेंगे यह निश्चयकर्के मान क
र्णके मारणेविषे अर्जुनसहित पांचहोवेंगे और अर्जुनके मा
रणे मो कर्णसहित पांचहोवेंगे २४
तं पुत्र गृद्धिनी भूयो माता पुत्र मथाब्रवीत् भ्रातॄणां
स्वस्ति कुर्वीथा येषां स्वस्ति चिकीर्षसे २५
हे मुने पुत्रलोभवाली कुंतीमाता कर्णपुत्रको बहुरु कहतीभ
ई हे कर्ण जौनसे भ्राताचारोंको तूं स्वस्ति क्षेमकर चाहताहै
उनको निश्चयकर्के क्षेमकल्यानकी तेने कर्तव्यहै २५
एवमुक्त्वा किलपृथा विसृज्य प्रययौ गृहान् सोर्जुने
न हतोवीरो भ्राता भ्राता सहोदरः २६
सो कुंती ऐसे कर्णको निश्चयवाक्य कहिकर्के बहुरु विदा
कर्के अपनी निवास गृहको जातीभई सो हमारा भ्राता कर्ण
अपने भ्राताने अर्जुनने महावीरही माराहै २६
नचैव विवृतो मंत्रः पृथाया स्तस्य चाविभो अथशू
रो महेष्वासः पार्थेनासौ निपातितः २७
कुंतीमाताने उसके साथ मंत्रजोकिया जोउसने मंत्रकहा सो
कुंतीने हमारी प्रतिनही कहा इसीसे सो महा शूरवीर म-
हारथी अर्जुनने रणविषे माराहै २७
अहंत्वाता सिंथपश्चा त्स्वसोदर्यं द्विजोत्तम पूर्वजं
भ्रातरं कर्णं पृथाया वचनात्प्रभो २८
हे महाप्रभो तैसे हेतुकर्के आन्दवाली जो मेराहृदय अतिदुः
खीहोताहै जोतो कर्णको नहीमारते अर्जुनकोभी कर्णन-
ही मारता तो कर्ण अर्जुनके सहायकर्के हम इंद्रकोभी रण
मे जीतलेते २८
तेनमे दूयते तीव्रं हृदयं भ्रातृ घातिनः कर्णार्जुन
सहायोहं जयेयमपि वासवम् २९
हेभगवन् जब सभाविषे दुरात्मा धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनादि
कोंकर्के हमक्लेशको प्राप्तहोतीहै तो हमको जबक्रोध तत
काल उदय होतारहा उसीकालविषे कर्णको देषकर हमारा
क्रोध शांतहोजावे २९

श्री॰ शा॰ प॰ टी॰ ६

सभायां क्लिश्यमानस्य धार्तराष्ट्रै दुरात्मभिः सहसो-
त्पतितः क्रोधः कर्णं दृष्ट्वा प्रशाम्यति ४०
वहुर जवकर्ण दुर्योधनके हितकी वांछाकरके छलक्रीडाविषे स
भाविषे अतिकटु अरु अतिरूक्ष वाणी जालको कहताभया ४०
यदाह्यस्य गिरोरुक्षाः शृणोमि कटुकोदयाः सभायां
गदतो द्यूते दुर्योधन हितैषिणः ४१ तदा नश्यति मे
क्रोधः पादौ तस्य निरीक्ष्यह कुंत्याहि सदृशौ पादौ क
र्णस्येति मतिर्मम ४२
मेरको कर्णकी वाणी सुनकर क्रोधशांत होताभया क्रोधशां
तिके हेतुको कहतेहै कर्णके चरणजोहै सो कुंतीके चरण स
न दृष्टहोवे तव क्रोधशांत होजातारहा ४२
सादृश्य हेतु मन्विच्छन् पृथायास्तस्य चैवह कारणं
नाधिगच्छामि कथंचिदपि चिंतयन् ४३
मेरेको कर्णविषे कुंतीके चरणोकी समानता दृष्टहोवे तव
मे समानताके कछुनही जानताभया इसविचारको मे वहुत
करताभया इसकारणसे मोको क्रोधशांति होजावे ४३
कथंनु तस्य संग्रामे पृथिवी चक्रमग्रसत् कथंच श
प्तो भ्राताते तन्मे वक्तुमर्हसि ४४
हेभगवन् मे आपको और संशयकी इच्छाकरताहुं कर्णके र
थचक्रको रणविषे कैसे ग्रसलेतीभई वहुरु मेराभ्राता कर्ण शा
पको कैसे प्राप्तभया इसहेतुको आपमोको कहने योग्यहो ४४
श्रोतु मिच्छामि भगवं स्त्वत्तः सर्वं यथातथं भवान्हि
सर्व विद्विप्रो लोके वेद कृताकृतं ४५ इतिश्रीमहा-
भारते राजधर्मे कर्णाभिज्ञाने प्रथमोध्यायः १
इस हेतुको मे आपसे श्रवणकरा चाहताहुं आपमोको यथा
तथा प्रकारसे कहो आपतो सर्ववेत्ता विप्रवरहो जोकछु लो
कविषे प्राणीगणोको त्रैकालका कृत अकृतहै उसको सर्व
प्रकारसे जानतेहो ४५ इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि रा
जधर्मे कर्णाभिज्ञाने प्रथमोध्यायः १
वैशंपायन उवाच सएवमुक्तस्तु मुनि र्नारदो वद
तांवरः कथयामास तत्सर्वं यथाशप्तः सूतजः १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय योनारदमुनि इसप्रकार राजा
नेकहा सोतो राजाको उस्के सर्वव्रतांतको कहताभया मुनि
सर्वप्रकारके वचनकहनेवाले वक्ताजनोंकेश्रेष्ठहैं जैसे सूर्य
पुत्र कर्ण शापकोप्राप्तभया उसकथाको कहताभया १
नारदउवाच एवमेतन्महाबाहो यथावदसि भारत कृष्णा
या नकर्णार्जुनयोः किंचि दविषह्यं भवेद्रणे २
नारदउवाच हेमहाबाहो आपजैसे सर्ववृतांत कहाहै सोतै
सेहीहै अर्जुनको ऋौर कर्णको रणविषे कोइकार्य अशक्यनहीहै २
गुह्यमेतत्तु देवानां कथयिष्यामि तेनघ क्षत्रियाणां
महाबाहो यथावृत्तमिदं पुरा ३
जो प्रश्न तुमनेकिया सो देवतागणोंका गोप्यमंत्रहै हेमहा
बाहो आपपाप प्रसंगसे रहितहो जो इसकाहेतुहै उसको आप
भी समझलेवो जैसायह पूर्वव्रतांतभयाहै उसकोश्रवणकरो ३
क्षत्रं स्वर्गं कथं गच्छेच्छस्त्रपूत मिति प्रभो संघर्ष
जननस्तस्मा कन्या गर्भो विनिर्मितः ४
कर्ण अर्जुनके वैरका मूलकारणको कहतेहैं देवतागण
को परस्पर यहमंत्रभया यह क्षत्रीलोक शस्त्रसे पवित्र होक
र स्वर्गको कैसे प्राप्तहोवेगा ऐसा उनकामंत्र संकल्पजोहै
सोवैरके वास्ते कन्यागर्भ भयाहै सोई क्षत्रियोंके वंशरूपी
वनको परस्पर संघट्टकरणेहारा भयाहै जैसे वांसकेसंघ
र्षणसे अग्निउत्पन्नहोतीहै तैसे क्षत्रवंशोके संघर्षण कन्या
गर्भरूपी वैरकी अग्निदेवता सत्यकरतीहै ४
सबाल स्तेजसा युक्तः सूतपुत्र त्वमागतः चकारांगि
रसंश्रेष्ठा धनुर्वेदं गुरोस्तदा ५
सो कन्यागर्भ कुंतीसे सूर्यकापुत्रभया बालभावविषेही
अतितेज संयुक्त भयाहै धनुर्वेदकी प्राप्तिवास्ते अंगिरावं
शविषे श्रेष्ठब्राह्मणको गुरुकरताभया उससगुरुसे धनु
र्वेदको प्राप्तहोताभया बहुरउ दुर्योधनका सखाहोताभया ५
सबलं भीमसेनस्य फाल्गुनस्य च लाघवं बुद्धिं
च तव राजेंद्र यमयो र्विनयं यथा ६
सोकर्ण भीमसेनके अतिबलको देखकर ऋौर अर्जुनकी
धनुर्वेदविषे लाघवताको देखकर अर्जुनकी वासुदेवके
साथ सखाभाव देखकरके ६

श्री॰ ग॰ प॰ टी॰ ७

7

सख्यंच वासुदेवेन बाल्ये गांडीव धन्वनः प्रजानामनु
रागंच चिंतयानो व्यदह्यत ७

हेराजन् तेरीमहाउत्तम बुद्धिको जानकर और नकुल सहदे
वोविषे अतिविनय देषकरके और तुमारेविषे सर्वप्रजाके अनुरा
गकोदेषकर परमचिंताकरके अंतःकरणमा दग्धहोताभया ७

ससख्यं मकरोद्बाल्ये राज्ञा दुर्योधनेन च युष्माभि
र्नित्यसंद्विष्टो दैवाच्चापि स्वभावतः ८

हेराजन् सोकर्ण बालभाव विषेही दुर्योधन राजाके साथ स
खोभावको करताभया और देवमंत्रके स्वभावसे तुमारे सा
थ सदाही द्वेष करताभया ८

सर्वाधिकमथालक्ष्य धनुर्वेदे धनंजयं द्रोणं रह
स्युपागम्य कर्णोवचन मब्रवीत् ९

वहुरु अर्जुनको धनुर्वेदविषे सबसे अधिक बलर देषकरके
द्रोणजीको एकांत प्रणाम करके वचनको कहताभया ९

ब्रह्मास्त्रं वेत्तु मिच्छामि सरहस्य निवर्तनं अर्जुनेन
समं चाहं युद्धेय मितिमे मतिः १०

हे ब्रह्मन् मे आपसे ब्रह्मअस्त्रको प्रयोगनिवृति सहित जाना
चाहताहू जिसकरके मे अर्जुनके साथ बराबर युद्धकरो य
ह मेरीमती चाहतीहै १०

समः शिष्येषुवः स्नेहः पुत्रेचैव तव ध्रुवं त्वत्प्रसा
दान्नमां ब्रूयु रकृतास्त्रं विचक्षणाः ११

हे प्रभो मे जानताहू तुमारास्नेह पुत्रोंविषे और शिष्योंविषे
एकसमानहै तुम्हारेसे अस्त्रोंकी प्राप्तिकरके मोको धनुर्वेद
को बलर वेत्ता लोक तुमारे प्रसादसे अकृतास्त्र नहीकहे इसवा
स्ते मोको आपब्रह्मास्त्रको उपदेशकरो ११

द्रोणस्तथोक्तः कर्णेन सापेक्षः फाल्गुनं प्रति दौरा
त्म्यं चैव कर्णस्य विदित्वा तमुवाचह १२

हेराजन् कर्णने जबद्रोणको ऐसाकहा द्रोणजीनेजाना यह
अर्जुनके साथ वैरकरताहै इसप्रकार कर्णकी दुष्टताजान
कर कर्णको वचन कहतेभये १२

ब्रह्मास्त्रं ब्राह्मणोविद्या द्यथावच्चरित व्रतः क्षत्रियो
वा तपस्वीयो नान्योविद्यात् कथंचन १३

हे सूतपुत्र ब्रह्मास्त्रको महाव्रतवाला ब्राह्मणजानेगा वहूउ
जो तपस्वी नहींहोवे सोभी जानेगा और जाती ब्रह्मास्त्र ज्ञान
के योग्यनहींहे १३

इत्युक्तो गिरसां श्रेष्ठ मामंत्र्य प्रति पूज्य च जगाम स
हसा रामं महेन्द्रं पर्वतं प्रति १४

कर्णको द्रोणजीने एसा जबकहा तब कर्ण द्रोणको पूजा
कर्के विदाहोकर शीघ्रही परशुरामजीके प्रति महेन्द्र पर्व
तको जाताभया १४

स तु राम मुपागम्य शिरसाभि प्रणम्य च ब्राह्मणो
भार्गवोस्मीति गौरवेणाभि गच्छत १५

हेराजन् सोकर्ण परशुरामजी को प्राप्तिहोकर सिरकर्के
प्रणामकर्के हेपिताजी हेगुरुजी मैभृगुवंसी ब्राह्मणहूं
इसप्रकार गुरुकुलके गोत्रको कहताभया वहूउभी शिर
कर्के प्रणाम करताभया १५

रामस्तं प्रति जग्राह पृष्ट्वागोत्रादि सर्वशः सउके
स्वागतं चेति प्रीतिमान भवद्भृशं १६

परशुरामजी उसको अपनागोत्री जानकर शिष्यभावकर्के
अपनी शुश्रूषा करणेको ग्रहणकरतेभये उसका आगत स्वा
गतकरतेभये वहूउ उसविषे अतिप्रीतिवाले होतेभये १६

तत्र कर्णस्य वसतो महेन्द्रे स्वर्ग संमिते गंधर्वैः रा
त्तसै यैत्तै देवैश्चासी त्समागमः १७

कर्णको महेन्द्रपर्वतविषे निवासकर्ते स्वर्गके समान सुख
प्राप्तभयाहै तहांकर्णको गंधर्वोंके साथ रात्तसोंकेसाथ य
त्तोंकेसाथ देवगणोंकेसाथ समागम होताभया १७

स तत्रेषस्त्र मकरोत भृगुश्रेष्टा तथाविधः प्रिय
श्चाभवदमर्त्ये देवदानवरत्तसां १८

कर्णजोहै सोसभकोकर्ण अतिप्रियहोताभया तहां परशु
रामजीसे अस्त्रविद्याके अभ्यासको करताभया १८

सकदाचि त्समुद्रांते विचराश्रमांतिके एकःख
ड्ग धनुष्पाणिः परिचक्राम सूर्यजः १९

सोकर्णतीरमे गुरुके आश्रम समीपविषे किसीकालमें य

श्री० ग० प० टी० ८

8

तुम खड्गको हाथविषे धारकर्के रकेला विचरताभया १९
सोग्निहोत्र प्रसक्तस्य कस्यचिद्ब्रह्मवादिनः जघाना
ज्ञानतः पार्थ होमधेनुं यदृच्छया २०
वह ऋगया प्रसंगसे अज्ञानकर्के अग्निहोत्री किसी ब्रह्मवा
दी धेनुको देवगतीकर्के मारताभया २०
तदज्ञान कृतंमत्वा ब्राह्मणस्य न्यवेदयत् कर्णः प्र
सादयंश्चैव मिदमित्यब्रवीद्वचः २१
हे राजन् कर्ण जो है सो अपने अपराधको अज्ञानकृत जानक
र्के ब्राह्मणको प्रसन्नतावास्ते ऐसेवचनको कहताभया २१
अबुद्धिपूर्वं भगवन् धेनुरेषा हतातव मयात्र प्र
सादं च कुरुष्वेति पुनः पुनः २२
हे भगवन् मैने यदृच्छमारी धेनु अज्ञानपूर्वं मारीहै तुम
अपराधको क्षमाकर्के मेरेविषे प्रसाददृष्टिकरो ऐसेवार
वार कहताभया २२
तंसविप्रो ब्रवीत्क्रुद्धो वाचा निर्भर्त्सयन्निव दुराचार
वधार्हस्त्व फलंप्राप्नुहि दुर्मते २३
सोब्राह्मण क्रोधकर्के अत्यंत अनादरके समानवाणीकर्के व
चनको कहताभया हे दुर्बुद्धे तूं इस कर्मकर्के वधके योग्यहै
इसके फलको अवश्यही पावेगा २३
येन विस्पर्धसे नित्यं यदर्थं घटसे भृशं युध्यतस्ते
न ते पाप चक्रं भूमि र्ग्रसिष्यति २४
जिसकेसाथ तूं स्पर्धा करताहै जिसको जीतनेवास्ते यत्नक
रताहै हे पापी उसकेसाथ तबतेरा युद्धहोवेगा तब तुमारे
रथके चक्रको भूमिग्रस लेवेगी २४
ततश्चक्रे महीग्रस्ते मूर्धानंते विचेतसः पातयि
ष्यति विक्रम्य शत्रुर्गच्छ नराधम २५
तब तुमारा रथचक्र भूमिग्रस्तभया तब रथचक्र उठानेके
समयमें तुम्हाराशत्रु तेरेसिरको अपने पराक्रमकर्के पृ
थिवीविषे गिराय देवेगा अब इहांसे चलाजा २५
यथेयं गौर्हता मूढ प्रमत्तेन त्वयामम प्रमत्तस्य ·

तथा शत्रुः शिरस्ते पातयिष्यति २६
जैसे तेने हमारी धेनु प्रमादकर्के मारी है तेसेही तेरे प्रमादकर्के तेरा शत्रु तेरे शिरको छेदकर्के पृथिवीविषे गिराइ देवेगा २६
शप्तः प्रसादयामास ततस्तं द्विजसत्तमं गोभिर्धनैश्च रत्नैश्च स चैनं पुनरब्रवीत् २७
हे राजन् विप्रने इसप्रकार कर्णको शापदिया तब कर्ण विप्रवरको गोदान धनधान्यरत्नदान कर्के प्रसन्नतावास्ते यत्नकरताभया सो ब्राह्मण वृद्ध कर्णको वचन कहताभया २७
नेदं मद्व्याहृतं कुर्यात् सर्वो लोकोपि वै मृषा गच्छ वा तिष्ठ वा यद्वा कार्यं तत्ते समाचर २८
हे जीव इसलोकविषे मेरा कहा वचन कदापि मिथ्या नहीहोहेगा अब तू अपने इच्छासे चलेजाओ अथवा ठाडेरहो जोतुमको और कार्यकरणाहै उसको अपने इच्छासे करो २८
इत्युक्तो ब्राह्मणेनाथ कर्णो दैन्याद्धोमुखः राममभ्यगमद्भीतस्तदेव मनसास्मरन् २९ इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे कर्णशापो द्वितीयोध्यायः २
हे राजन् कर्णको ब्राह्मणने ऐसा वचन कहा कर्ण दीनतासे अधोमुख होकर भयभीत जैसा परशुरामजीको अस्त्रविद्या मनसाकर्के जाताभया २९ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे कर्णशापोनाम द्वितीयोध्यायः २
नारदउवाच कर्णस्य बाहुवीर्येण प्रणयेन दमेन च तुतोष भृगुशार्दूलो गुरुशुश्रूषया तथा १
नारदउवाच हे राजन् परशुरामजी कर्णके भुजपराक्रम करके और गुरुप्रेमकरके और इंद्रिय जयकरके गुरुसेवाकर्के अति संतुष्ट होतेभये १
तस्मै स विधिवत्कृत्स्नं ब्रह्मास्त्रं सनिवर्तनं प्रोवाचाखिलमव्यग्रं तपस्वी तनपस्विने २
कर्णको प्रयोग संहारविधि संयुक्त ब्रह्मास्त्र मंत्रको कहदेतेभये आपभी परशुराम महातपस्वी है सो कर्णको तपस्वी जानकर्के ब्रह्मास्त्र कहतेभये २
विदितास्त्रस्ततः कर्णो रममाणो श्रमे भृगोः चकारै वै

श्री॰ रा॰ प॰ टी॰ ९

9

धनुर्वेदे यत्नमद्भुत विक्रमः ३
कर्णजो है सो ब्रह्मास्त्र ज्ञानको पाइकर भृगुश्रेष्ठजो परशुराम
उनके आश्रमविषे रमताभया बहुरभी श्रमखेदको त्यागकर
धनुर्वेदके अभ्यासमों यतन करताभया ताते अति अद्भुत
पराक्रमी होताभया ३
ततः कदाचि द्रामस्तु चरन्नाश्रम मंतिकात् कर्णेन
सहितो धीमा नुपवासेन कर्षितः ४
हेराजन् उसकालके अनंतर परशुरामजी कर्णकेसाथ आप
ने आश्रमकेपास अपनी इच्छासे विचारतेभये परंतु महात
मांहै उपवास व्रतकरके अतिकृश होगयेहै ४
सुष्वाप जामदग्न्योवै विश्रंभोत्पन्न सौहृदः कर्ण
स्योत्संग आदाय शिरःक्लांत मना गुरुः ५
कर्णको अपने परम विश्वासके पात्रशिष्य सुहृदय जान
करके उछंगमो सिरकरके अति खेदवाले मनकरके गुरुजी
निद्राको करतेभये ५
अथकृमिः श्लेष्ममेदो मांसशोणित भोजनः दारु
णो दारुणस्पर्शः कर्णस्या भ्याश मागतः ६
जब परशुरामजी कर्णके उछंगमो निद्राको प्राप्तभये उसी
कालविषे एकमहाकृमी मांसरक्तके भोजन वाला कर्ण॰
के समीप प्राप्तभया सोकृमि महादारुण है महादारु
ण स्पर्शवाला है ६
सतस्योरु मथासाद्य बिभेद रुधिराशनः नैवैनम
शकत्क्षेप्तुं हंतुंवापि गुरोर्भयात् ७
रक्तपानकरणेहारा सोकृमी कर्णके ऊरूदेशको आनकर
भेदकरताभया कर्णजोहै सोगुरोके निद्राभंगके भयसे दू
रकरणेको और मारणेको नही यत्नकर सकताभया ७
संदश्यमानस्तु तथा कृमिणा तेन भारत गुरोः प्र
बोधनाशंकी तमुपैक्षत सूर्यजः ८
हेराजन् कर्ण उसकृमीके दंशकरके अतिपीडित भयाहै
गुरोकी बोध शंकाकरके उसके पीडाको अपने तेजबल
करके सहार लेताभया ८

कर्णस्तु वेदनां धैर्याद् असह्यां विनिगृह्य तां अकम्प
नयन्नथय धारयामास भार्गवं ९
उसके असह्य पीड़ाको कर्ण अपने धैर्य करके रोक लेताभया
कंपितभी नहीभया परशुरामजीको अपने उछंगमांही पी
ड़ारहित धारण कर्ताभया ९
यदास्य रुधिरेणांगं परिस्पृष्टं भृगूद्वहः तदा बुध्य
त तेजस्वी संत्रस्तश्चेदमब्रवीत् १०
तब परशुरामजीका शरीरविषे कर्णके रुधिरका स्पर्शभया
तब भृगुश्रेष्ठ परशुरामजी प्रबुद्धभये उनके अतितेजके त्रास
को कर्ण प्राप्तभया उसको परशुरामजी यहकहतेभये १०
अहोस्म्यशुचितां प्राप्तः किमिदं क्रियते त्वया कथ
यस्व भयमुत्सृज्य याथातथ्यमिदं मम ११
अहोमूढ हे कर्ण मेरा रुधिर स्पर्शकरके अशुद्धताको प्राप्त
भया तैने यह क्या किया भयत्यागकर तुम यथार्थ वृत्तांत
हमको कहो ११
तस्य कर्णस्तदाचष्ट कृमिणा परिभक्षणं ददर्श
रामस्तं चापि कृमिं सूकर सन्निभं १२
तब कर्णने कहा हेप्रभुजी मोको इस कृमीने दंशकिया है
तब परशुरामजी उसी कृमीको सूकर समान आकार वाली
को देखतेभये १२
अष्टपादं तीक्ष्णदंष्ट्रं सूचीभिरिव संवृतं रोमभिः
सन्निरुद्धांग मलर्कं नाम नामतः १३
कैसा है सो कृमी अष्टपाद है और तीक्ष्णदंष्ट्रावान है बहुत सू
चीसमूह करके वेष्टित है और रोमजालकरके परिपूर्ण उसके अंग
है नामकरके अलर्क नामसे प्रसिद्ध है १३
स दृष्टमात्रो रामेण कृमिः प्राणानवासृजत् तस्मि
न्नेवासृक्क्लिन्नः तदद्भुत मिवाभवत् १४
हे राजन् रामजीने जब उसको दृष्टिगोचरमात्र किया तबही
सो कृमिः रामजीके रुधिरविषे प्राणोंको त्यागकर देताभया
सबलोकों महाअद्भुत आश्चर्य होताभया १४
ततोंतरिक्षे ददृशे विश्वरूपः करालवान् राक्षसो
लोहितग्रीवः कृष्णांगो मेघवाहनः १५

वहुरूप तत्कालही आकाशविषे महाविकरालभारी शरीरवाला
राक्षसरूप दृष्टहोताभया रक्तवर्ण जिसकी ग्रीवाके रोमजालहै
और सभही शरीर जिसका कृष्णांगहै महामेघ घटाके समान उ
सका स्वरूप दृष्ट होताभया १५

**सरामं प्रांजलिर्भूत्वा वभाषे पूर्णमानसः स्वस्तिते
भृगुशार्दूल गमिष्यामि यथागतं १६**

सो राक्षस आकाशमें स्थितहोकर अंजली दोनोहस्तोंकी बां
धकर परशुरामजीको कहताभया हे भृगुवंशके शार्दूल अ
वमेरी मनसा पूर्णभईहै तुमको स्वस्तिकल्याण होवै मैंतुमारे
प्रसादसे अपने यथायोग्य अपनेदेशको जाताहूं १६

**मोक्षितो नरकादस्मा द्भवता मुनिसत्तम भद्रंचते
स्तु वंदेत्वा प्रियमे भवता कृतम् १७**

हे मुनिश्रेष्ठ इसनरकसे मोको आपने मुक्त कियाहै तुम
कोअतिकल्याण प्राप्तहोवे मै आपको वंदन करताहूं तुमने
मेरा वहुत प्रिय कल्याण कार्य कियाहै १७

**तमुवाच महावाहु र्जामदग्न्यः प्रतापवान् कस्त्वं
कस्माच्च नरकं प्रतिपन्नो ब्रवीहितत् १८**

हेराजन् महाप्रतापवाले महावाहु परशुरामजी उसको कह
तेभये हेसाधो तू कौनहै इसनरकयोनीको कौनहेतुसे प्राप्त
भयाथा अपनाजोवृत्तांतहै उसको तुमकहो १८

**सोब्रवीदहमासंप्रा द्दंशोनाम महासुरः पुरादेव
युगेतात भृगोस्तुल्य वयाइव १९**

तवसो राक्षस परशुरामजीको कहताभया हे भगवन् मै पूर्व
कालविषे दंशनामकरके प्रसिद्ध महाअसुर होताभया एकवेले
सत्ययुग भृगुमहाऋषीके समान अपने शरीरकी अवस्थाको
करलेताभया १९

**सोहं भृगोः सदयितां भार्यामपहरं वलात् महर्षे
रभिशापेन कृमिभूतो पतंभुवि २०**

भृगुमहाऋषीकी अतिप्रेमवाली भार्याको अपने मायावल
से हरलेताभया तव भृगुमहाऋषीके शापकरके कृमीरूपहो
कर पृथिवीविषे पडताभया २०

अब्रवीच समाक्रोशा त्वत्पूर्व पितामहः मूत्रश्लेष्मा

शनैः पाप निरये प्रतिपत्स्यसे २१
हे रामजी भृगुमहाऋषि तुमारे वंशके पूर्वले पितामह हैं सो मेरे
को शापसे पतितभये देखकर्के कहतेभये हे पापी तू अभक्ष्य
भोजनवाले नरकको प्राप्त होवेगा २१
पापस्यांतो भवेद्ब्रह्म निमेवं तमथाब्रुवं भविता
भार्गवाद्रामा दितिमाम ब्रवीद्भृगुः २२
वहउ मैंने भृगुजीको कहा हे प्रभो मेरे शापका अंत कैसे होवे
सो कृपासे कहो वहउ मोको भृगुजीने कहा तेरे शापका मोक्ष जो
है सो मेरे वंशमें भार्गवराम होवेगा उसके दर्शनसे तेरे शाप-
का मोक्ष होवेगा २२
सोऽहमेतां गतिं प्राप्तो यथा ह्यकुशलस्तथा त्वया सा
धु समागम्य विमुक्तः पाप योनितः २३
सो मैं शापकर्के अपने पापजैसी गतीको प्राप्तभया आपके द
र्शनजैसा मोको कुशल प्राप्तभया है हे साधो तुमारे समागमको
पाइकर मैं पापयोनीसे मुक्तभया हूं तुमको मेरी प्रणाम है २३
एवमुक्त्वा नमस्कृत्य ययौ रामं महासुरः रामः कर्णं
च सक्रोध मिदंवचन मब्रवीत् २४
हे राजन् सो अलर्क राक्षस परशुरामजीको ऐसे कहिकर प्रणा
म कर्के जाताभया उसके अनंतर परशुरामजी कर्णको क्रोध
कर्के यह वचन कहतेभये २४
अतिदुःख मिदं मूढ न जातु ब्राह्मणः सहेत् क्षत्रि
यस्यैव ते धैर्यं कामया सत्यमुच्यतां २५
हे मूढ तू अपनेको मोसे भार्गव गोत्र ब्राह्मण कहा है मैं जान
ता हूं ऐसे अतिभारी पीडाके दुःखको ब्राह्मणजाती कदापि स
हार नहीं सकता तेरेको धैर्य क्षत्रीके समान है अपनी कामना
कहो अपनी जातीको सत्य कहो २५
तमुवाच ततः कर्णः शापभीतः प्रसादयन् ब्रह्म
क्षत्रांतरे जातं सूतं मां विद्धि भार्गव २६
हे राजेन्द्र कर्ण ऐसे गुरुवचनको सुनकर शापसे भयभीत हो
कर गुरुकी प्रसन्नताकी वांछाकर्के कहताभया २६
राधेयः कर्ण इति मां प्रवदंति जना भुवि प्रसादं कुरु
मे ब्रह्मन् मम लुब्धस्य भार्गव २७

श्री॰ हे प्रभुजी मै ब्राह्मण क्षत्री जातीकी संकरता विषे पैदाभयाहूं आ
शा॰ प॰ पमोको सूतजातीको जानो अपराध क्षमाकरो शिष्यजानकर
टी॰ मोपर प्रसाद करो २७
११ पिता गुरुन संदेहो वेदविद्या प्रदःप्रभुः अतो भार्गव
इत्युक्तो मयागोत्रं तवांतिके २८
पिता गुरूही होतेहै इसमो संदेह नहीहै पिताकेवल जन्मदाता
होताहै विद्याके दाता गुरुजोहै सो उभयलोकविषे कल्याणदाता
है ताते परमपिता गुरुही होतेहै इसहेतुसे मैने अपनागोत्र भार्गव
कहाहै तुम्हारा गोत्रही तुम्हारा समीप कहाहै २८
तमुवाच भृगुश्रेष्ठः सरोषः प्रहसन्निव भूमौ निपति
तं दीनं वेपमानं कृतांजलिं २९
हे राजन् कर्ण ऐसे कहिकर अतिदीनतासे साष्टांग प्रणाम कर
ताभया पृथिवीविषे पडताभया हाथोंकी अंजली करताभया ऐ
सेकर्णको देखकर भृगुश्रेष्ठ परशुरामजी सक्रोध होकर हसते
जैसे वचनको कहतेभये २९
यस्मान्मिथ्योपचरितो ह्यस्त्र लोभादिह त्वया तस्मा
देतन्नते मूढ ब्रह्मास्त्रं प्रतिभास्यति ३०
हे मूढ जिसब्रह्मास्त्रके लोभसे तैंने हमारेसाथ मिथ्यावचनका
आचारकियाहै सो ब्रह्मास्त्र तोको तेरे अंतकालविषे नही फुरेगा ३०
अन्यत्र वधकालात्ते सदृशेन समीयुषः अब्राह्मणे
नहि ब्रह्म ध्रुवं तिष्ठेत्कथंचन ३१
तेरे वधकालसे विनातेरेको यह रणविषे तोको फुरेगा तब तेरे
समान परमयोधा तोको मारेगा तब तोको यहनही फुरेगा कारे
ते यह ब्रह्मास्त्र गायत्रीरूप परंब्रह्म मंत्रहै सो ब्रह्मरूपता विना
चिरकाल कही स्थित नहीहोगा ३१
गच्छेदानीं नतेस्थान मनृतस्येह विद्यते नत्वया सदृ
शो युद्धे क्षत्रियो भविता भुवि ३२
अब इहांसे तैं चलाजा ऐसे मिथ्यावादी कपटीको हमारे आस्था
ननहीहै तैंने शुश्रूषा कीनीहै इसका वर तोको देतीहै तेरे समा
न रणविषे सूरमा और क्षत्री नहीहोवेगा ३२
एवमुक्तः सरामेण न्यायेनोपजगामह दुर्योधन मु
पागम्य कृतास्त्रोस्मीति चाब्रवीत ३३

इतिश्री राजधर्मे कर्णास्त्रप्राप्ति स्तृतीयोध्यायः ३
हे राजन् परशुरामने ऐसे कर्णको कहा तो कर्ण शिक्षारीतिसे
प्रणाम करके जाताभया बहुत आनंदकरके दुर्योधनको कहताभया
मैं अस्त्रविद्याको सिद्धकर आयाहूं ३३ इतिश्रीमहाभारते राजध
र्मे कर्णास्त्रप्राप्ति स्तृतीयोध्यायः ३

नारदउवाच कर्णस्तु समवाप्यैवं शस्त्रं भार्गव नंद
नात् दुर्योधनेन सहितो मुमुदे भरतर्षभ १
नारदउवाच हेभरतवंशोमो श्रेष्ठ हेराजन् युधिष्ठिर इसप्रकार
कर्ण शस्त्रविद्याको भृगुश्रेष्ठ परशुरामसे पाइकर दुर्योधनके सा
थ प्रेमकरके बहुत आनंद पाइकर प्रसन्नहोताभया १
ततः कदाचि द्राजानः समाजग्मुः स्वयंवरे कलिंग
विषये राजन् राज्ञश्चित्रांगद स्यच २
तबसे किसीकालमें कलिंगदेशविषे जो चित्रांगद राजासे उसकी
कन्याके स्वयंवरविषे राजालोक आवते भये २
श्रीमद्राज पुरंनाम नगरं तत्र भारत राजानः शत
शस्तत्र कन्यार्थं समुपागमन् ३
इसके राज्यविषे अति संपदायुक्त राजपुरनामकरके प्रसिद्ध न
गरहै उस विषे शतसंख्योंके राजालोक कन्या प्राप्तिवास्ते आ
वते भये ३
श्रुत्वा दुर्योधन स्तत्र समेता न्सर्वं पार्थिवान् रथेन
कांचनांगेन कर्णेन सहितो ययौ ४
दुर्योधन जोहै सो उस नगर विषे संपूर्ण राजालोकोंको प्राप्त
भये सुनकरके कांचनके अंगोपांगवाले रथकरके कर्णको सा
थलेकर तहां जाताभया ४
ततः स्वयंवरे तस्मिन् संप्रवृत्ते महोत्सवे समापेतु
र्नृपतयः कन्यार्थे नृपसत्तम ५
जबतहां महाउत्सववाला स्वयंवर समाज प्रवृत्तभया तब स्वयंवर
के समाजविषे सभही राजालोक कन्याके अर्थ आनवैठतेभये ५
शिशुपालो जरासंधो भीष्मको वक्रएवच कपोतरोमा
नीलश्च रुक्मीच दृढविक्रमः ६
वहां शिशुपालराजा और जरासंध और भीष्मकराजा और दंतवक्र
आयाहै कपोतरोमा और नीलराजा और दृढपराक्रमी रुक्मभी आ
याहै ६

श्री॰ रा॰ य॰ टी॰ १२

शृगालश्च महाराज स्त्रीराज्याधिपतिस्तथा अशोकः शतधन्वा च भोजो वीरश्च नामतः ७

और स्त्रीराज्यकास्वामी महाराजा शृगालराजाभी आयेहैं अशोकराजाभी आयाहै शतधन्वाभी आयाहै और महावीर नरकासुर भी आयाहै ७

एतेषामीव बहवो दक्षिणां दिशि माश्रिताः म्लेच्छाचार्यश्च राजानः प्राच्योदीच्याश्च भारत ८

हे राजन् यह राजालोक पूर्वदिशाके है औरभी राजालोक दक्षिण दिशाके आयेहै औरभी पूर्वदिशाके म्लेच्छाचार्य राजालोक औरभी पूर्वदिशाके उत्तरदिशाके राजालोक आयेहै तहां ८

कांचनांगदिनः सर्वे शुद्धजांबूनदप्रभाः सर्वे भास्वरदेहाश्च व्याघ्रा इव बलोत्कटाः ९

यह सभही राजालोक कांचनके बाजूबंधादि भूषणोंकरकें शुद्ध सुवर्णकी प्रभा संयुक्त है सभही सुवर्णके प्रभावकरकें विराजमान है जैसे महाबलकरकें सिंहव्याघ्र मदमत्त दृष्टहोतेहैं तैसे महापराक्रमके तेजकरकें उद्धत है ९

ततः समुपविष्टेषु तेषु राजसु भारत विवेश रंगं साकन्या धात्रीवर्षवरान्विता १०

उसके अनंतर सभही राजालोक सिंहासनोंविषे उपविष्टभये तब सो राजकन्या स्वयंवरकी राजसभाको प्रवेशकरतेभये कैसे है धात्री जो अपनी दाई और वर्षवरजोहै अंतःपुरचारी नपुंसक· लोक तिन्हकरकें संयुक्तभई है १०

ततः संश्राव्यमानेषु राज्ञांनाम सुभारत अत्यक्राम· द्धार्तराष्ट्रं साकन्या वरवर्णिनी ११

हे राजन् उसके अनंतर राजालोकोंके कुलनामोंको कन्याको जब श्रवण करावणेका बहुत कोलाहलभया तब सो राजकन्या अपनी इच्छाकरकें अनेक राजलोकोंको छोडगई जब उसकन्याने धृतराष्ट्रके कुलको श्रवणकरकें दुर्योधनकोभी छोडदिया ११

दुर्योधनस्तु कौरव्यो नामर्षयत लंघनं प्रत्यषेधश्च तां कन्यां मसत्कृत्य नराधिपान् १२

कुरुवंशका अभिमानी दुर्योधनराजा अपनी अनादरको नही सहारताभया उसकन्याको सभही राजालोकोंको अनेक क्रूरवचनों करके अनादर करताभया १२

सवीर्यमदमत्तो भीष्मद्रोणमुपाश्रितः रथमारो
प्यतां कन्यामाजहार नराधिपः १३
अपने वलकर्के मदमत्तहै भीष्मद्रोणादिकोंकी सहायता संयु
क्तहै उस कन्याको अपने रथपर चढ़ायकर्के हरलेताभया १३
तमन्वयाद्रथी खड्गी वद्धगोधांगुलित्रवान् कर्णः श
स्त्रभृतां श्रेष्ठः पृष्ठतः पुरुषर्षभः १४
उस दुर्योधनकी सहायतावास्ते कर्णभी अपने हाथविषे वाण
वर्षाको करणेवास्ते अंगुलीकी रक्षावास्ते गोधाचर्मको बांधकर्के
धनुषको चढ़ायकर पीछे जाताभया सभहीशस्त्रधारी सूरमाज
नोंविषे कर्ण अतिश्रेष्ठहै वडामहारथी पुरुषश्रेष्ठहै १४
ततो विमर्दः सुमहान् राज्ञामासीद्युयुत्सतां सन्नह्य
तां तनुत्राणि रथान्योजयतामपि १५
तत्कालही युद्धकरणेहारे सभही सूरमानी राजालोक अपने
अपने कवचोंको धारतेभए रथोंको तयार करतेभए तिन्होंका
महासंयुद्ध कोलाहल होताभया १५
तेभ्यधावत सक्रोधाः कर्ण दुर्योधना उभौ शरवर्षा
णि संवन्तो मेघाः पर्वतयोरिव १६
सो सभहीराजा सक्रोध होकर कर्ण दुर्योधनके पीछे वेगकर्के
धावतेभये रथोंकोतयार करतेभये और पर्वतोंके ऊपर मेघोंकी
जलधारा वर्षाजैसी वहोत् प्रकारकी वाणवर्षाको करतेभये १६
कर्णस्तेषामापततामेकैकेन शरेणह धनूंषि शरा
श्वापान्पातयामास भूतले १७
हेराजन् कर्णजोहै सो शत्रुगणोंके सर्वप्रकारसे जेते राजालोक
अपनेआगे युद्धकरणेको आयाहै तिन्होंके धनुष और वाणोंको अ
पने एक एक वाणकर सभहीको छेदकर्के भूतलमों गिराइभया १ ७
ततो विधनुषः कांश्चित् कांश्चिदुद्यतकार्मुकान् कांश्चि
दुद्वहतो वाणान् रथशक्ति गदास्तथा १८
तदनंतर कर्णजोहै सो शत्रुगणोंको सर्वप्रकारसे जीतलेताभ
या कैसेहै शत्रुगण कटेहुए धनुषोंको छोड़कर औरधनुष धार
णे हारेहै वहुत केते शत्रुगण वाणवर्षा करतेहै केते सारथी
विना आपही रथको वाहतेहै केते शक्तिको धारणेहारेहै केते
तो गदायुद्ध करणेहारेहै १८

श्री.
रा. ध.
टी.
१२
13

लाघवाद्दारुणीकृत्य कर्णः प्रहरतां वरः हतसूतां
श्च भूयिष्ठान्सविनिन्ये नराधिपान् ११
कर्ण रणमें प्रहार करणेहारे महारथीयोंविषे श्रेष्ठहै उसकर्के व
हुत शत्रुगणोंकी सारथी मारगयेहैं इसप्रकार सभको आकुलक
के जैते राजलोकहैं सभकोही कर्ण जीत लेताभया ११
ते स्वयं वाहयंतोश्वा न्पाहिपाहि तिवादिनः अपेयुस्ते
रणंहित्वा राजानो भग्न मानसाः १०
जिनके रणविषे सारथीमारेहैं सोकर्णको पाहिपाहि त्राहि त्राहि
अपनी रक्षावास्ते पुकारतेहैं रणको त्यागकर पलायनकरते कन्या
प्राप्तिका मनोरथ सभकाही भग्नहोताभया १०
दुर्योधनस्तु कर्णेन पाल्यमानो भयानकः हृष्टः क
न्यामुपादाय नगरे नागसाह्वयम् ११ इतिश्री महाभार
ते राजधर्मे दुर्योधन स्वयंवरः चतुर्थोध्यायः ४
दुर्योधन राजाका कर्णने रक्षणकियाहै स्वयंवरकी उसकन्याको
ग्रहणकर्के हृष्टपुष्टभयाहै हस्तनापुरको आजाताभया ११ इति
श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे दुर्योधनस्वयंवरः चतुर्थोध्यायः ४
नारदउवाच आविष्कृत बलंकर्णं श्रुत्वाराजा समाग.
धः आह्वय द्वैरथेनाजौ जरासंधो महीपतिः १
नारदः हेराजन् कर्णने जब अपना रणमें प्रगटकिया तब राजाज
रासंधने श्रवणकिया सो मगधदेशका महीपति राजा जरासंध
जोहै सो अपनेसाथ युद्धवास्ते कर्णको बुलावताभया १
तयोः समभवद्युद्ध दिव्यास्त्र विदुषोर्द्वयोः युधिनाना
प्रहरणै रन्योन्य मभिवर्षतोः २
सो दोनो दिव्यअस्त्रोंके वेत्ताहै तिनोका परस्परविषे युद्ध होताभ.
या सो दोनोंही द्वंद्व युद्धविषे नानाप्रकारके अनेक शस्त्रोंकरके
परस्पर वर्षा करतेभये २
क्षीणबाणौ विधनुषौ भग्नखड्गौ महींगतौ बाहुभिः
समसज्जेतां उभावपि बलान्वितौ ३
दोनोको परस्पर युद्धमे तूणीरसे बाणक्षीण होगयेहैं धनुष.
भी छिन्नगयेहै बहुर खड्गयुद्धमो खड्गभी टूटगये तो पृथिवी
मों दोनो प्राप्तभयेहैं अन्योन्य परम उग्रबल संयुक्तहै बाहु
युद्ध करतेभये ३

बाहुकंटकयुद्धेन तस्य कर्णोथ युध्यतः बिभेद सं
धि देहस्य जरया श्लेषितस्य च ४

कर्णजो है सो बाहु युद्ध करते राजा जरासंधके देहकी सोलेंहु सं
धीको छिन्न भिन्न करताभया कैसाहै जराने देह प्रथम दोखंडहो उ
त्पन्नहोताभया वहुडु जरानामक राक्षसीने उसके संधी करीहै ४

स विकारं शरीरस्य दृष्ट्वा नृपति रात्मनः प्रीतोस्मीत्य
ब्रवीत्कर्णं वैर मुत्सृज्य भारत ५

हे राजन् सो राजा जरासंध अपने शरीर भेदवाले विकारको जान-
कर्के साथ वैरको त्यागकर्के कहताभया मैं अब तुम्हारेको युद्ध
कुशलता देखकर प्रसन्न भयाहूं ५

प्रीत्या ददौ स कर्णाय मालिनीं नगरीमथ अंगेषु नर
शार्दूल स राजासीत्सपत्नजित् ६

वहुडु कर्णको प्रीतिकर्के मालिनी नगरीको देताभया तब कर्णजोहै
सो अंगदेशोंविषे सर्वशत्रुगणको जीतनेद्वारा राजा होताभया ६

पालयामास चंपां च कर्णः परबलार्दनः दुर्योधन-
स्यानुमते तवापि विदितं तथा ७

सो कर्ण शत्रुबलको पीडा करणेद्वारा भया दुर्योधनके मनकर्के
चंपापुरीकोभी पालना करताभया इसवृत्तांत तेरुभी विदितहै ७

एवं शस्त्रप्रतापेन प्रथितः सोभवत्क्षितौ त्वद्धितार्थं
सुरेंद्रेण भिक्षितौ वर्मकुंडले ८

हे युधिष्ठिर सोकर्ण इसप्रकारके अपने शस्त्रविद्याके प्रतापकर्के
पृथिवीविषे प्रसिद्धहोताभया इसोहेतुसे तुमारे हितवास्ते इंद्रने
कवच कुंडलोंकी भिक्षाको विप्ररूपकर्के याचन कियाहै ८

स दिव्ये सहजे प्रादात् कुंडले परमार्चिते सहजं कवचं
चापि मोहितो देवमायया ९

ऐसा कर्ण दानमानकारी भयाहै जिसको विप्ररूपी इंद्रने याचना
करी तो अपने शरीरसाथ उत्पन्नभये जो दिव्यकवच और कुंडलहैं
तिनोकाभी देताभया इसप्रकार देवमायाकर्के मोहित भयाहै ९

विमुक्तः कुंडलाभ्यां च सहजेन च वर्मणा निहतो वि
जयेनाजौ वासुदेवस्य पश्यतः १०

सो कर्ण अपने शरीरके साथ उत्पत्तिवाले कुंडलोंसे रहित भ
या वहुडु अपने साथ उत्पत्तिवाले दिव्यकवच करकेभी युक्त
भया तो अर्जुनने माराहै वहुडु रणविषे वासुदेवजीकी कृपा
दृष्टिसे माराहै १०

श्री·
रा· ध·
टी·
१४

14

भीष्मावसाना संख्ये यो रथस्यार्थेन कीर्तिनात् शल्या
तेनो वधाश्चापि वासुदेव नयेन च ११
वहुत ब्राह्मणोके शापकर्के और परशुराम गुरुजीके शापकर्के वहु
त कुंतीके शापकर्के और इंद्रकी मायाकर्केभी मारा है ११
रुद्रस्य देवराजस्य यमस्य वरुणस्य च कुवेर द्रोण यो
श्चैव कृपस्य च महात्मनः १२
और भीष्मनेभी शापकर्के इस्का अपमान कियाहै इहकरण अर्धरथी
कहाहै और शल्यने इस्का तेजोवध कियाहै और कृष्णभगवानके शि
क्षाकर्के माराहै यह अर्जुनजोहै सो रुद्रके अस्त्रको जानताहो देवरा
ज इंद्रके अस्त्रको जानताहो यमके अस्त्रको जानताहो वरुणके अस्त्र
को जानताहो कुवेरके अस्त्रको जानताहो द्रोणाचार्यकी अस्त्रविद्या
को जानताहो वहुत कृपाचार्यकी अस्त्रविद्याको जानताहो १२
अस्त्राणि दिव्यान्यादाय युद्धे गांडीव धन्वना हतो वै
कर्तनः कर्णो दिवाकर समद्युतिः १३
हे राजन् अर्जुनने इसप्रकार दिव्यअस्त्रको लेकर सूर्यके समान
तेजवाला सूर्यपुत्रजो कर्णहै सो अपने दिव्यअस्त्र विद्यावल कर
के माराहै १३
एवं शप्तस्तव भ्राता वहुभिश्चापि वंचितः नशोच्यः
सनरव्याघ्रो युद्धेहि निधनगतः १४ इतिश्री महाभार
ते राजधर्मे कर्णवीर्य कथनं पंचमोध्यायः ५
इस प्रकार सो तेराभ्राता कर्णजोहै सो वहुत शापोंको प्राप्तभयाहै
और वहुत उत्तमलोकोंने तुम्हारे हितवास्ते उसको वंचना करीहै
ताते क्षत्रधर्मकर्के रणविषे मृत्युको प्राप्तभयाहै उसको तुमभी न
हीं शोचना जो पुरुष धर्मयुद्धकर्के रणविषे शत्रुसन्मुख मरताहै
सो परमउत्तम गतिको प्राप्तहोताहै १४ इतिश्री महाभारते शांतिपर्व
णि राजधर्मे कर्णवीर्यकथननाम पंचमोध्यायः ५
वैशंपायनउवाच एतावदुक्त्वा देवर्षि विरराम सना
रदः युधिष्ठिरस्तु राजर्षि दध्यौ शोक परिप्लुता १
वैशंपायनउवाच हेराजन् जनमेजय नारदमुनी जोहै सो ऐसे राजा
युधिष्ठिरको कहिकर्के तुष्णीभूत होताभया युधिष्ठिर राजा तो व
हुतभी शोक मग्न भयाहै फेरभी शोक व्याकुलतासे ध्यानस्थित हो
ता भया १
तं दीन मनसं वीरं धोकोपहत मानसं निःश्वसंतं य
थानागं पर्यश्रु नयनं तथा २

इस प्रकार राजा शोककर्के दीनमनभयाहै बहुत श्वेतवर्ण भया
है शोकसे हतचित्तभयाहै महाआतुर भयाहै भगनदंत सर्प समा
न उछास करताहै शोकके अश्रुदोष करके नेत्र जिसके उलटे
जैसे भयेहै १

कुंतीशोक परीतांगा दुःखोपहत चेतना अब्रवी न्म
धुरांभाषां कालेवचन मर्थवत् २

ऐसे राजाको देखकर कुंतीशोककर्के पीडित अंगभयेहै दुःखक
र्के जिसकी चेतना हतभईहै सो मधुरवचनकर्के उसकालविषे
पुत्रको वचन कहतीभई ३

युधिष्ठिर महाबाहो नैनंशो चित महेसि जहिशो
कं महाप्राज्ञ शृणुचेदं वचोमम ४

हे युधिष्ठिर तू महाबाहो राजाहै राजधर्मको जानकर इसकर्णको
शोचकरणे योग्यनहीहै इस शोकको त्यागकर हे महाबुद्धिवाले
मेरे इसप्रकारके वचनको श्रवणकर ४

यतितः सभयापूर्वं भ्रात्रसाप यितेतव भास्करेण
च देवेन पित्राधर्म भृतांवर ५

सो कर्ण प्रथम कालमें मैने तुह्मारेको भ्राता बुझावने वास्ते
यत्नकरवायाथा और उसका पिता जो भास्कर सूर्य उसनेभी उसे
प्रतियत्नकियाहै धर्मधारी पुरुषोंविषे श्रेष्ठ उस कर्णने नही
मानता भया ५

यदाक्तं हितकामेन सुहृदा हित मिच्छता तथादि
वाकरे णोक्तः स्वप्नांते मम चाग्रतः ६

जोकोई सुहृदय संबंधी होताहै उसने अपने प्रिय संबंधीके हि
तकी वांछाकर्के हितवचन कहने योग्यहै सो दिवाकर देवजीने
मेरे आगेहि स्वप्नांतर जैसा कहाहै पांडव तेरे कनिष्ठभ्राताहै उनके सा
थ तैने मिलकर पालना करणे योग्यहै ६

नचैव शक्तःशाव रुहवा स्नेहकारणैः पुरा प्रत्य
नेतवा गेते वाप्यकता त्वया ७

इस प्रकार उसकर्णको तुह्मारे स्नेह प्रेमके संबंधकरणेको भानु
देवता नही समर्थभया तुह्मारे साथ शांतिकरणी और एकता
करणी जिस कर्णने नहीमानी ७

ततः कालपरीतः स वैरस्यो द्धरणेरतः प्रतीपकारी
युष्माक मितिचोपे क्षितोमया ८

उसी कारणसे सोकर्ण आपही कालके वशभया वैरको अंसंम प्र
कट करणे लगा तमोरही विपरीत करणे लगा इसी वास्ते मेने
भी उसको त्याग कियाहै ८

इत्युक्त्वा धर्मराजस्तु मातरं बाष्पकुलेक्षणः उवाच वा।
के धर्मात्मा शोक व्याकुल चेतनः ९

हे जनमेजय इसप्रकार माताने जबकहा तब राजायुधिष्ठिर जोहै
सो शोकासुजलकर्के पूर्णनेत्रभया बहुत शोककर्के व्याकुल चेतना
वालाभया महाधर्मात्माहै इसीसे उसको धर्मराज कहतेहैं सो कुंती
माताको वचन कहताभया ९

भवत्या गूढमंत्रत्वा त्पीडितोस्मी त्युवाचतं शशापच
महातेजाः सर्वलोकेषु योषितः नगुह्यं धारयि॰
ष्यंती त्येवं दुःखसमन्वितः १०

हे माता तैने मोको अपनी गूढमंत्रता कर्के अतिपीडित कियाहै
ऐसे कहिकर सर्वलोकोंके देखते अतितेजकर्के इसीलोकोंको
शापदेताभया आजसे जो जगतविषे इस्त्रीजनहै सो गूढकार्यको
मनविषे नही चिरकाल धारण करेगी ऐसे शापकर्के बहुत दुः
ख संयुक्त होताभया १०

सराजा पुत्र पौत्राणां संबंधि सुहृदांतथा स्मरन्नु
द्विग्न हृदयो बभूवो द्विग्न चेतसः ११

हे जनमेजय सो राजा फेरभी पुत्र पौत्रके सुहृत संबंधियोंके स्म
रन कर्के उदासीन हृदय होताहै बहुत विक्षिप्त चित्तजैसा हो
ताहै ११

ततः शोक परीतात्मा सधूम इव पावकः निर्वेद म
गमद्धीमान् राजासंताप पीडितः १२ इतिश्री महा
भारते राजधर्मे स्त्रीशापः षष्ठोध्यायः ६

उसके अनंतर बहुतभी शोक व्याकुल चित्तकेसा भयाहै जैसे धूम
वाला व्याप्त अग्निमंद प्रकाश वाला होताहै और राज्यभोगादिकों
विषें वैराग्यको प्राप्तभयाहै अत्यंत संतापकर्के पीडित होताभ।
या १२ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे स्त्रीशापः
षष्ठोध्यायः ६

वैशंपायनउवाच युधिष्ठिरस्तु धर्मात्मा शोक।
व्याकुलचेतनः शुशोच दुःखसंतप्तः स्मृत्वाकर्णं म
हारथं १

वैशंपायनउवाच हेराजन् जनमेजय युधिष्ठिरराजा अतिधर्मात्माहै
सो शोककर्के आकुलचित्तभयाहै कर्णमहारथीको स्मरणकर्के दुख
से संतप्तभया वहुत सोच करताभया १
आविष्टो दुःखशोकाभ्यां निःश्वसंश्च पुनःपुनः दृष्ट्वार्जु
नमुवाचेदं वचनं शोककर्षितः २
सो राजा दुःखशोक से पीडितभयाहै वारवार ऊर्धश्वास होताहै शो
ककर्के अतिकृशभयाहै पास अपने अर्जुनको देखकर्के वचनको
कहताभया २
युधिष्ठिरउवाच यद्भैक्ष्यमाचरिष्यामो वृष्ण्यंधक पु
रेष्वपि ज्ञातीन्निःपुरुषान्कृत्वा नेमां प्राप्स्याम दुर्गतिं ३
युधिष्ठिरउवाच हे अर्जुन जो हम वनवासको तर्के वृष्णियादव अंध
कयादवोंके पुरोविषे भिक्षावृत्तीको कर जीवते तो इसप्रकार पृथि
वीको निःपुरुषां कर्के ऐसेपरमदुर्गतिको नहीं प्राप्तहोते ३
अमित्रानः समृद्धार्थाः वृत्तार्थाः कुरवःकृताः आत्मा
नमात्मना हत्वा किंधर्म फलमाप्नुमः ४
हमको पूर्वकालमों ऐसी कल्पना वनीहै हमारे जो अमित्रशत्रुहै
सो पुरुषार्थ संपदावाली भयेहै और हमतो वृत्तार्थहै का संतिम पु
रुषार्थ संपदावालीहै इसी कल्पनाकर्के कुरुवंशके समही इसप्र
कार संहारको प्राप्तभयेहै जो तूकहै हमको यह अपने ज्ञातीकेही
शत्रुवनेहै इनका वधही धर्महै तो सत्त हमने अपने ज्ञातिरूप आत्मा
आपही मारांहै इसधर्मका फल इहां जसनहीहै तो परलोककों कौं प्रा
प्तहोवेगा हमारा उभयलोक नष्टभयाहै ४
धिगस्तु क्षात्रमाचार धिगस्तु वलपौरुषं धिगस्त्व
मर्षं येनेमां मापदं गमिता वयं ५
जो शास्त्रमो क्षत्रीको शुद्धकरण कहाहै तोभी यहमहा मलिनतासे
निंदायोग्यहै इस हेतूसे ऐसे यह क्षत्रधर्मके आचारको धिगहै और
ऐसे वल पौरुषको धिगहै ऐसे सकलसाधन समाजको धिगहै जि
सकर्के ऐसे शोक आपदाको प्राप्तभयेहैं ५
साधु क्षमा दमः शौचं मवैराग्य ममत्सरः अहिंसा
सत्यवचनं नित्यानिवन चारिणां ६
जो हमारेको धर्म आचार कर्तव्यहै उसको करतेहैं अव हमको क्ष
मा अच्छीहै इंद्रियोंकादम अच्छीहै देहका मलका शौच अच्छाहै
वैराग्य अच्छाहै किसीकी स्पर्धानहीकरणी अच्छीहै अहिंसा अच्छीहै
सत्यवचन अच्छाहै यहधर्म वनवासी पुरुषको नित्यकर्तव्यहै इनको
हमने त्यागकियाहै ६

श्री॰ रा॰ प॰ टी॰ १६ 16

वयं तु लोभान्मोहाच्च दंभमानं च संश्रिताः इमामवस्था मापन्ना राज्यलाभ बुभुत्सया ७

हमतो आपही लोभसे मोहसे दंभको और मानको आश्रितभयेहैं इसी से ऐसी शोक मूल आपदाको प्राप्तभयेहै हमको राज्यलाभकी भोग तृस्नाने ऐसा दुःखी कियाहै ७

त्रैलोक्यस्यापि राज्येन नास्माकश्चि त्प्रहर्षयेत् बांधवा न्विहतान्दृष्ट्वा पृथिव्यां विजयैषिणः ८

हमको अब त्रैलोक्य राज्यभी होवे तोभी कोई हर्षको नहीकरता याते हम अपने बांधवोंको मरे देखकर विजयकी वांछाही हमको हेतु वनीहै ८

तेवयं पृथिवी हेतो रवध्यान्पृथिवी समान् संपरित्य ज्य जीवामो हीनार्थाः हत बांधवाः ९

इसीसे हमने पृथिवी लाभके हेतुसे अवध्य जो पृथिवी समान सुख कारी बंधुजनोंको रणविषे त्यागकर्के जीवतेहै अब संपूर्ण भोगार्थों से हीनभयेहैं हमारे सब बांधव मारे गयेहैं ९

आमिषे गृध्यमानानां मशुनः श्वनामिव आमिषंचै वनोऽभीष्टं मामिषस्य विवर्जनम् १०

हमने श्वानवृत्ति समान मांसकी तृस्नाकीनीहै ऐसा राज्यरूपीमांस हमको इष्टनहीहै अरु भरे बंधुजनरूपी मांस वनारहे तो हमको इष्टहै और बंधुजनोंका अर्थरूपी राज्यादिक मांस बधकर्के प्राप्तहोवे सो इष्ट नहीहै उसका वर्जनाही हमको इष्टहै १०

नपृथिव्या सकलया नहिरण्यस्य राशिभिः नगवा श्वे न सर्वेण तेत्याज्याय इमेहताः ११

अब इसी अर्थको भिन्नकर्के स्पष्ट कहतेहैं हे अर्जुन यह जो बंधुजन मारिगयेहै सदा त्यागयोग्यहै जो सकल पृथिवीका राज्यप्राप्तहोवे और सुवर्णकी मेरु समान राशिप्राप्तहोवे और सर्वप्रकारका गो धन और अश्वादिवाहन संपदाप्राप्त ऐसेराज्यलाभके वदले बंधुजनोंका त्यागनही और मारणे की वार्ता कहाहै ११

काममन्यु परीतास्ते क्रोध हर्ष समन्विताः मृत्युयानं समारुह्य गता वैवस्वत क्षयं १२

यह हमारे बंधुजन आपही क्रोध प्राप्तहोकर्के रणविषे क्रोधहर्षके वशभयेहै आपही मृत्युकी सवारी चढके अपने अपराधकर्के आपही यमलोककोगये तोभी इनके बधका दोष हमको सतावनाहै १२

बहु कल्याण संयुक्ता तिष्ठंति पितरः सुतान् तपसा
ब्रह्मचर्येण सत्येनच तितिक्षया १३

हे अर्जुन इसलोकविषे माता पिता जोहै सो बहुत कल्याण संयुक्त वां
छा करतेहै तपकर्के ब्रह्मचर्यकर्के सत्यवचनकर्के और सुखदुःखादि
द्वंद्वोके सहारणेकरके १३

उपवासैस्तथेज्याभि र्व्रतकौतुकमंगलैः लभंते मा
तरो गर्भां स्तान्मासान् दश बिभ्रति १४

और उपवासादि व्रतोंकर्के यज्ञादि व्रतकर्के कौतकादि मंगलोंकर्के
जब माता के गर्भको प्राप्तहोतीहै तब दशमासभर गर्भको कष्टकरके
धारण करतीहै १४

यदि स्वस्ति प्रजायंते जाता जीवंति वायदि संभावि-
ता जातबला स्तेदद्यु र्यदिनः सुखं १५

जो सुखसे जन्मलेतेहै बहुत जन्मकर्के जो जीवतेहै फेर जब गुणसंप
न्नवाले पुत्रहोवे तो हमको सुखदेवेंगे १५

इत्येवा पुत्रवेति कृपणाः फलहेतुकाः तासामयं स
मारंभो निर्वृत्तः केवलो फलः १६

इसलोकविषे परलोकविषे पुत्रसंतानकर्के कल्याण होताहै ऐसी आ
शाकर्के फलकी आसा प्रतिदीनहोतीहै इसी आशाकर्के पुत्रसंतानका
यत्नकरतीहै उन्हके यत्नका आरंभ अब जिसका सफलभयाहै १६

यदास्या निहताः पुत्राः युवानो मृष्टकुंडलाः अभुक्त्वा
पार्थिवान्भोगा नृणान्यपहाय च १७

ऐसी जो पुत्रोंके माताहै तिन्होंकेपुत्र युद्धभयेहैं पुत्र सुवर्ण कुंडलों
कर्के उज्वल शोभावालेहै तिन्होने पृथिवीके राज्यभोग नहीभोगे १७

पितृभ्यो देवताभ्यश्च गता वैवस्वतक्षयं १८

और देवऋण पितृऋण तिन्होनेभी नहीसमाप्तकिया इसप्रकार अ
पने जन्मके फलको वृथाकर्के यमराजपुरको गयेहैं १८

यदैषां मेव पितरौ जातकामा उभावपि संजात ब-
ल ऐश्व र्यदैव निहता त्वया १९

अब राजा अपनी माताजो उसकोभी कहतेहैं हेअंब हेमाता जोनमे य
ह धृतराष्ट्रके पुत्रहै दुर्योधनादिक इन्हके माता पिताजोहै गांधारी धृत
राष्ट्र इन्हको जबपुत्र कामनाके सुख फलका समय आन प्राप्तभया उ
सी कालविषे दुर्योधनादि राजा रणविषे मारेहै १९

संयुक्ताः कामम न्युभ्यां क्रोध हर्षा समंजसा नतेजय
फलं किंचि द्भोक्तारो जातु कर्हिचित् २०

श्री·
शा· प·
टी·
१२
17

सभही यहकामजो ऐश्वर्यकी अभिलाषा सम्रजो उसकी अप्राप्तिमो
हीनना और कामकी प्रतिबंधविषे क्रोधहोना अति संताप कामकी प्राप्ती
मो अतिहर्षना इन्होंके संबंधकर्के परस्पर विषम वृत्ति भयेहे तिन्हको
जयका जो फल पृथिवी भोग अथवा स्वर्गभोग तिसको देवहीनही भोग
गे जीवना मरणाही सभको बनाहे जीवेनेको मिले सोइ अच्छाहे जोम
रगया उसका सभही नष्टभयाहे उसका परलोकभी कछु नही बन
ताहे २०

पंचालानां कुरूणां च हता एव हि मे हताः नचेत्सं·
वोनयं लोका अपश्येत स्वकर्मणा २१
तातें जो जो हमारे संबंधी कौरवोंके पांचालोंके मरगयेहें सो म
रीहीहे मरकर्के स्वर्गभोग कहांहे किसने देखाहे वहुउ कहा कछु
वनताहे मेरे उपरन्त सभ मिथ्याहे मरणकालविषे कामादिकोकर्के
मलिन अंतकरणवाले होनेकर्के २१

वयमेवास्य लोकस्य विनाशे कारणं स्मृताः धृत
राष्ट्रस्य पुत्रेण निकृत्या वंचिता वयं २२
हे अर्जुन इसकालविषे विनाशकारण हमही भयेहे और हमारे दुः
खका कारण धृतराष्ट्रका पुत्रहे जिसने हमारे भागका राज्य छल
छलसे हरलियाहे २२

सदैव निकृतिप्रज्ञो द्वेष्टा मायोपजीवनः मिथ्या
वृत्तस्य सततं मस्मास्व नुपकारिषु २३
दुर्योधन सदा हमारे विषे छल बुद्धि करताभया मायाकेही साधन
करताभया उसके वास्ते राजा धृतराष्ट्रभी सदा मिथ्यावृत्ति वनार
हा इसके साथ हमने कछु विरोधकार्य नहीकरा हम इसको पिता
ही मानते भये २३

नसकामा वयं ते च नचास्माभि र्नतैर्जितं नतैर्भुक्ते
य मवनि र्न नार्यो गीतवादितं २४
इन्होंने प्रथम हमको कामभोगसे युक्त किया पश्चात आपभी काम
भोग संयुक्तभये हमने कछु भोग नही भोगा कछु जेता न उन्होंने ह
मसो जीता न हमने कछु जीता यह पृथिवी भोग सुखवाली किसी
ने नही भोगी नाना स्त्रियोका गीतवातनादि मंगलाचाररहा २४

नामात्यसुहृदां वाक्यं न च श्रुतवता श्रुतं नरत्नानि
परार्ध्यानि न भूर्न द्रविणागमः २५
दुर्योधनने अपनी मात्यमंत्री सुहृदोंका वाक्यमाना नाना वहुश्रु
त पंडितोका वाक्यसुना हमारे उनमरन्न उसको सहारा न पृथिवी।
का लाभसहारा नानाद्रव्यका आगम हमारा सहारा २५

अस्माद्धेषेण संतप्तः सुखं नस्येष विंदति दृष्ट्वैनस्मा
सुना दृष्ट्वा विवर्णो हरिणः कृशः २६
केवल हमारे द्वेषकर्के संतप्तभया अपने सुखविषे उसने सुखनही
पाया हमारेविषे जब संपदाकी वृद्धिदेषी तबही उसको वर्णविकार
भया पीतवर्णहोगया चिंताकर्के अतिकृशभया २६
धृतराष्ट्रस्य नृपतेः सौबलेन निवेदितः ततोपिता पुत्र
गृद्धित्वा दनुमेने नयेस्थितः २७
धृतराष्ट्रराजा इसवृत्तांतको शकुनिने निवेदन किया तब पुत्रके प्री
तिकर्के इसकीउदि प्रवृत्तीतिको स्थिती के मानलेताभया २७
अनवेक्ष्यैव विदुरं गांगेयंच महामतिं असंशयं सुयं
राजा यथैवाहं तथागतः २८
इसको विदुर हित कहताभया उसको नहीमाना वृद्ध महामति भी
षपितामह हितकहते भई उसकोभी नहीमाना इस हेतुसे निश्चय
कर्के यह क्षयको प्राप्तभया जैसे हम हतपुत्रभयेहै तैसे यहराजा
भी हतपुत्र भयाहै २८
अनियम्या शुचिलुब्धं पुत्रं कामवशानुगं पतितो य
शसो दीप्तात् घातयित्वा सहोदरान् २९
यहराजा पापकारी अतिलोभी अपने पुत्रको कामलोभके वशभये
को नहीरोका तातेसदा प्रकाशमान अपने राजधर्मके यशसे क्षीण हो
कर पड़ाहै दुर्योधनभी अपने सहोदर भ्राताजोहै तिनोको घातकराइक
के यशोकी प्राप्तिसे पतितभयाहै २९
स्मौहि वृद्धो शोकाग्नौ प्रक्षिप्यस्य सुयोधनः अस्मत्प्र
द्वेषसंतप्तः पापबुद्धिः सदैवहि ३०
यह जिसके मातापिता वृद्धहै इन्होको शोकाग्निविषे गेरकर ह
मारी संपदाको दर्शनकर्के संतप्तभयाहै सदाही पापबुद्धी इस
खोटी दशाको प्राप्तभयाहै ३०
कोहिबंधु कुलीनस्स तथा ब्रूया त्सहृज्जने यथास्म
उक्तवान्वाक्यं युयुत्सुः कुरु सन्निधौ ३१
हे अर्जुन ऐसा कौनहैजो बंधुजनहै अपनी हितकारी सुहृद
लोकों विषे जैसे खोटे वचन करे जैसे खोटेवचन दुर्योधन कु
रुके सन्मुख युद्धकी इछाकर्के करताभया ३१
आत्मनोहि वयंदोषा द्विनष्टाः शाश्वतीः समाः

श्री·
रा· प·
टी·
१८
18

प्रदहंतो दिशःसर्वा भास्करा इव तेजसः २१
सो दुर्योधन हमारा शत्रु नहीहै अपना भ्राताहै अपनाही आत्माहै
सोको यह शोच वडाहै जो अपनेही दोषकर्के प्राणविनष्टभयेहै सदा
ही अनेक वरष दग्धभयाहै सभही दिशा हमारेको ऐसे पश्चातापक
र्कै और शोककी अग्निकर्कै प्रचंड सूर्यकी न्याई अपने तेजकर्कै दा
ह करतीहै २१

सोस्माकं वैरपुरुषो दुर्मतिः ग्रहंगतः दुर्योधन कृ
तेषेन कुलेनो विनिपातिते २२
सो दुर्योधन हमारे वंशके विनाशका आपही वैरका पुरुष वना
है आप दुर्बुद्धिहै वैरकर्केही महा वंधनको प्राप्तभयाहै यह हमारा
कुल दुर्योधनके निमित्तसे विनाशकी अग्निविषे पडाहै. २२

अवध्यानां वधंकृत्वा लोके प्राप्तास्म वाच्यतां कुल·
स्यास्यांत करणं दुर्मति पापकारिणं २४
हमजोहै सो भीष्मद्रोणादि पितृपितामह गुरु तिन्होका वधकर्के
लोकविषे गुरुघाती कुलघाती इत्यादि अपयशकी संज्ञाको प्राप्तभये
इसकुलका अंतकारी दुर्मति पापकारी दुर्योधनको कहतेहै २४

राजाराष्ट्र मरक्षेत्रा धृतराष्ट्रोध शोचति हताः सूरा :
कृतपापं विषयःस्वो विनाशितः २५
यह राजा धृतराष्ट्र ऐसे पुत्रको अपने देशराज्यके स्वामीकर्के हमा
रे साथही अव शोचता अपने कुलके महाशूर अनेकमारेहै महापा
पकियाहै और अपना देश विषय सभ विनाश कियाहै २५

हतानां विगतो मन्युः शोकोमां रुध यमसौ धने
जय कृतेपाप कल्याणो नोपहन्यते २६
हे अर्जुन सभको मारकर्के हमारे सभका दुर्योधनके प्रतिजो·
क्रोधरहा सो अव निवृत्त होगयाहै यह शोक केवल एकेरे
सोकोही पीडाकरताहै यह शोक किसी कल्याण कर्मके उपका
रके नही माराजाता २६

ख्यापने नत्तापेन दानेन तपसा पिवा निवृत्या
तीर्थ गमनात श्रुति स्मृति जपनवा २७
अपना पापकर्के कीर्तनकर्के नही निवृत्तहोता महादानकर्के न
ष्टनही होता व्रतचर्यादि तपकर्के नही जाता त्यागकर्के जाता
है श्रुति स्मृति पुराण पारायण श्रवणकर्के जाताहै वहुत मंत्र·
जापकर्के भी यहपाप निवृत्त होताहै २७

त्यागवांश्च पुनः पापं नालं कर्तुमितिस्थितिः त्याग
वान् जन्ममरणे नाप्नोतीति श्रुतिर्धुवा २८
हे भाई त्यागवान् पुरुष जोहै सो बहुत पाप करणेका उद्यम नहीं क
रता त्यागी पुरुष संसारविषे बहुत जन्म मरणकोभी नहीपावता
यह श्रुतिका अर्थ प्रसिद्धहै २८
प्राप्नवन्सा ज्ञानमतिं ब्रह्मसंपद्यते नरः मयंनेजय
निर्द्वंद्वो मुनिर्ज्ञानसमन्वितः २९
जब यह पुरुष त्याग करताहै तब ज्ञानयोगके मार्गको प्राप्तहो
ताहै और श्रवणमननादि यत्नकर्के अहं ब्रह्मास्मि ऐसी कुशल
बुद्धिको करताहै तो अखंडानंद ब्रह्मतत्वको होताहै ताते हेधनंज
य सोमे अवत्यागी होकर निर्द्वंद्व होताहूं अहंपण त्यागबुद्धिसे रहित
होइ ध्याननिष्ठाकर्के मुनिवृत्ति होताहूं ब्रह्मात्म एकनिष्ठासे युक्त है
नेवाहताहूं ब्रह्मज्ञान संयुक्त इच्छाकारी होताहूं २९
वनमामेष्य वः सर्वान् गमिष्यामि परंतप नहिक्ष
त्रवतोधर्मः शक्यः प्राप्तमिति श्रुतिः ४०
हे परंतप अर्जुन मे अव तुमको सबको कहिकर्के वनको जाता
हूं गृहस्थ होकर्के यज्ञकार्यकरना और अपना आचार इंद्रियांकादम
न अहिंसा दान स्वाध्यायकर्म यहगृहविषे नहीहोते सर्वधर्मोवि
षे ज्ञानआत्मदर्शनहि परमधर्म याज्ञवल्क्य जीनेकहाहै ४०
परिग्रहवतानन्मे प्रमत्तमरिसूदन मया रूष्टंतपा
पंहि परिग्रहसमीप्सता ४१
गृहस्थ हूनिकर्के मेने यह प्रमत्तपाप रूजाहै मेरेको गृहस्थाचा
रकी वांछाका फलभयाहै ४१
जन्मत्रय निमित्तेव शाकं प्राप्त मिति श्रुतिः सप
रिग्रह मुत्सृज्य हास्येराज्यं तथैवच ४१
ताते जन्मबंधनके त्रयनिमित्त मोको त्यागहि अच्छा साधनहै
सो मे अव गृहस्थधर्मको त्यागकरके संपूर्णराज्यकोभी त्याग
कर जाताहूं ४१
गमिष्यामि विनिर्मुक्तो विशोको विज्वरस्तथा ४२
सभसे मुक्तहोकर जैसे विशोकता होवैगी और शोक चिंताकी
निवृत्ति जैसेवने तैसीवांछाकर्के वनको जाताहूं ४२
प्रशाधिन्त्वमिमामुर्वी क्षेमां निहतकंटकां नममा
र्थोस्ति राज्येन भोगैर्वा कुरुसत्तम ४२

श्री॰
रा॰ ध॰
टी॰
४९
19

अब यह पृथ्वी पापबाधासे रहितभयाहै और कंटक शत्रुगण सभसा
रेगयेहै ऐसी पृथिवीको तूंही शासनकर ४३

एवमेव मुक्का वचनं धर्मराजो युधिष्ठिरः तूष्णीमासीत् नृपा
र्थः कनीयानर्जुन भाषत ४४

मोको अब राज्यके साथ अर्थ नहीहै और भोगोकर्केभी अर्थसिद्दि
नहीहै हे जनमेजय राजन् धर्मराज युधिष्ठिर ऐसी कहिकर तूसी
होताभया तब उसका कनिष्टभ्राता अर्जुन राजाकेप्रति वचन क
हताभया ४४

इतिश्री राजधर्मे युधिष्ठिर परिदेवनं सप्तमोध्यायः ७

इतिश्री राजधर्मे युधिष्ठिर परिदेवनं सप्तमोध्यायः ७

वैशंपायनउवाच अथार्जुन उवाचेदं अधिक्षिप्त मिवा
क्षमी अभिनीत तरवाक्य दृढवाद पराक्रमः १

वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय इसके अनंतर अर्जुनराजा
को वचन कहता भया कैसाहै राज्यशासनकी आज्ञाके राजा
के वचनकर्के अपनेको अनादरके आक्षेप जैसा मानताभया
कैसा वचन कहताभया जिसमो सर्वप्रकारकी नीतिहै और दृढ
है युक्ति और पराक्रमकेवाद उदाहरण जिसमो १

दर्शयन्स तदात्मान मुग्रमुग्र पराक्रमः स्मय मानो
महातेजा सृक्किणी परिसंलिहन् २

उग्रहै पराक्रम जिसका ऐसा अर्जुन सभको अपना आति जैसा स्व
रूपदिषावताभया और मंद उसकावनाहै महातेजवान्भयाहै औ
र अपने ओष्ठतटोंको रसनाकर्के चाटता जैसा राजाको कहता भ
या २

अर्जुनउवाच अहोदुःख महोकृछ्र महोवैक्लव्य मुत्त
म यत्कृत्वा मानुषंकर्म त्यजेथाः श्रियमुत्तमां ३

अर्जुनउवाच अहो हमारेको महाआश्चर्यरूपी दुःखभया और महा
आश्चर्यरूपी कष्टभयाहै स्वजनवधसे दुःखभयाहै शत्रुसेनाके परा
जयसे कष्टभयाहै यहराजा ऐसे मानताहै और महाकायरता भईहै
है जो अपने तेजधर्मकेर्के राज्यप्राप्तभया उसको त्यागकरणा अ
तिमूढताहै जो हमको अमानुष कर्मकियाहै ऐसेकर्के हमउत्तम
राज्य संपदाको त्यागदेवेगे ३

शत्रून्हत्वा महीं लब्ध्वा स्वधर्मेणोपपादितां एवं विधं
कथं सर्वं त्यजेथाः बुद्धिलाघवात् ४

हमने अपनेको दुःखदेवने हारे शत्रुको मारकर्के अपने पुत्रादिको
का शत्रुसे मरवाइकर्के अपने लज्जयमे कर्के समग्र पृथिवीको प्राप्त-
होइकर्के बहुत सर्वत्याग कारणे यहकार्य हमारी बुद्धिकी लघुतासे
बनताहे ४
क्लीवस्येह जनो राज्यं दीर्घसूत्रस्य वा पुनः किमर्थं च म
हीपाला नवधी क्रोधमूर्छितः ५
हे राजन् कायर पुरुषको राज्यकहा होताहे ओर दीर्घसूत्रको भी
राज्यकहा होताहे जो तुमको वनवास जेसी कायरता ओर दीर्घसूत्र
ताकर्के राज्यत्यागकी वांछारही तो क्रोधकर्के मूढहोकरके नानादे
शको राज्यलोकोंका रणविषे क्यों मरवायाहे ५
योऽस्मान्नि नीतिविभ्रंशस्य कर्मणा येनकेन चित् समा
रंभान् बुभूषन्त इतस्त्वस्मि रकिंचनः ६
हे महाप्रभो यहवाक्य हमारा प्रसिद्धहे आपसुनो जो पुरुष आप
ही अपने कायरताकर्के नष्टकल्याण गुणहोताहे सो अकिंचन
होताहे गुणपराक्रम संपदाहीन होताहे सो लोकविषे ऐसे क्रम
कर्के विख्यात नहीं होता बहुत पुत्रादि संयोग संबंधसे रहित हो
ताहे पश्चात् भिक्षावृत्तिकर्के येनकेन उपायेन अपना जीवना वो
हताहे तो महापौरुष पराक्रमकर्के जिन्हका प्रारंभकर्म बनताहे
ऐसे महासंपदावाले राज्यसंपदाकी इच्छाकरणेवाहे ६
सर्वलोकेषु विख्यातो नष्टपुत्रपशुसहितः कपाली नृ
प पापिष्ठां वृत्तिमासाद्य जीविता ७
नृतो सर्वलोकोंविषे ओर पुत्रपशुधानादि संपदा युक्तहे बहु
त पराक्रम संपदा युक्तहे जो कापाली वृत्तिकर्के भिक्षा जीवन-
को करेगा ७
समस्तराज्यं दत्त्वेते लोकाः किं वदिष्यन्ति सर्वारंभा
न्परित्यज्य इतस्त्वस्मि रकिंचनः ८
परम संपदा संपन्न राज्यको त्यागदेवेगा तो लोक तोको क्या
कहेगा जो राजा सर्व प्रारंभको त्यागकर्के नष्टकल्याण भयाहे
अकिंचन दरिद्रभयाहे भिक्षावृत्ति करताहे यह तो महामूढ
हे ऐसे महामूढ जैसे कार्यको किसहेतुसे करताहे ८
कस्मात् राज्यं समेभेजे कर्ते प्राकृतवत्प्रभो प्रसिद्धा
न क्लेशानाता जिता कृत्वा वनपरा ९
हे राजन् सर्वलोक विख्यात ऐसे उत्तमकुलविषे जन्मपाइकर्के ओ

शां॰ रा॰ ध॰ टी॰ १० ४०

समग्र पृथिवीको अपने क्षत्रधर्मसे जीतकर्के और त्यागकर्के धर्म अर्थ सबको त्यागकर्के वनको जाताहै सो तू अपनी मूढतासे जाताहै ९

धर्मार्थौ व्यखिलौ हित्वा वने मौढ्यात्वमीहसे यदिमानि हवींषीह विमथिष्यन्ति साधवः १०

तैने मोको राज्यकरणे कहाहै तो मोको राज्यकरना नहीहै जो तमने राज्यत्यागकिया राजाविना इसपृथिवीमो तस्करादि लोक परद्रव्यादि हरण करेंगे धनहीन लोकोंको होम यज्ञादि धर्मखंडित होजावेगे सो पाप निश्चयकर्के तमकोही प्राप्तहोवेगा १०

भवन्ति विप्रहीनानि प्राप्तं तामेव किल्बिषं अकिंचनाम नाशंस मिति वै नहुषो ब्रवीत् ११

तैने त्यागकर्के अकिंचनताइति श्रेष्ठमानीहै इसकी राजा नहुष ने अप्रमाण कियाहै जो धनका अभाव होताहै सोही पाप होताहै जब राजा नहुष अगस्त्यके शापकर्के अजगर सर्पभयाहै तब दरिद्रभावकर्के भीमसेनको ग्रासकरताभया तम्हारे समागमकर्के उसको शापमोक्ष भयाहै तब उसने मनुष्यग्रासरूप अपने कर्मको धिगकहाहै यहपाप अकिंचनतासे अधनतासे भयाहै तोंते दरिद्रकर्के अधनता होतीहै इसवृत्तिको धिगहै तोंते यहअधनता मुनिवृत्तिहै राजधर्मके वृत्ति नहीहै ११

दृष्टान्तस्य त्यधने धिगस्तु धनतामिह अश्वस्तन मृषीणांहि विद्यते वेदतद्भवान् १२

तमने जो असंग्रहवृत्ति श्रेष्ठीमानीहै सो ऋषीलोकोंकेवृत्तिहै जिसको लोकधर्मकरतेहै सो धर्मभी धनसेही होताहै १२

यं त्विमं धर्ममित्याहु र्धनादेव प्रवर्तते धर्मं संहरते तस्य धनं हरति यस्य सः १३

जो पुरुष जिसके धनको हरताहै उसके धर्मकर्मको सोई हरताहै हमही इसपापके हेतुभयेहै ताहे जो प्रथम हमाराधनही दुर्योधनके पुत्रोने हराहै तो हम उन्हको कैसाक्षमा करेंगे १३

क्रियमाणेधने राजन् वयंकस्य क्षमेमहि अभिशस्ते प्रपश्यन्ति दरिद्रं पार्श्वतःस्थिते १४

जो पुरुष दरिद्र होता है उसको धनी लोक अपने पास भये को देख
कर सभही उसको चोर जैसी अपराधीको जैसे देखते जाते दरिद्र
लोकविषे महापापका फल है उसको नमको उत्तम मानते हो १ ४

दारिद्र्यं पातकं लोके तत्तत् शंसितु मर्हसि पतितः
शोचते राजन् निर्धनश्चापि शोचते १५

हे राजन् जो पापकर्म करके पतित होता है सो अपने पापकर्मको
शोचता है और निर्धन पुरुषभी अपने पापकर्मको शोचता है ह
म निर्धन पुरुषका और पापी पतित पुरुषकी हीनताविषे विशे
षता कुछ नही जानते १५

विशेषं नाधिगच्छामि निर्धनस्या वरस्यच अर्थेभ्योहि
विवृद्धेभ्यः संवृत्तेभ्य स्ततस्ततः १६

जो अर्थ समृद्ध होवे और संग्रह कियेहोवे सभही धर्मक्रिया सर्व
प्रकारसे होती है जैसे नदीयां पर्वतोंसे प्रवृत्त होती है १६

क्रियाःसर्वाः प्रवर्तन्ते पर्वतेभ्य इवापगाः अर्थाद्धर्मश्च
कामश्च स्वर्गश्चैव नराधिप १७

हे राजन् अर्थसे धर्म होता है कामसंकल्पभी सिद्धहोता है स्व
र्गलोकभी सिद्ध होता है और लोकोंकी प्राणयात्राभी अर्थवि-
ना नही होती १७

प्राणयात्रापि लोकस्य विनार्थं न प्रसिद्ध्यति अर्थेनेह
विहीनस्य पुरुषस्याल्प मेधसः विच्छिद्यंते क्रियाःसर्वा
ग्रीष्मे कुसरितो यथा १८

जो पुरुष धनसंपदारूपी अर्थसे हीन है सो अल्पबुद्धि होता है
उसकी सभही धर्मक्रिया विच्छिन्न होती है जैसे ग्रीष्मकालविषे
तुच्छनदीयां स्वल्पजल होती है शुष्क होजाती है १८

यस्यार्था स्तस्य मित्राणि यस्यार्था स्तस्यबांधवाः यस्या
र्था सपुमांल्लोके यस्यार्थाः सचपंडितः १९

जिस पुरुषके पास अर्थ है उसके सभ है मित्र होते हैं जिसको अ
र्थ है उसके सभहि बांधव होते है जिसके अर्थ है सोई इसलोक
विषे पुरुष कहावता है प्रसिद्ध भी होता है जिसको अर्थ है सोई लो
कविषे महाप्रतिष्ठावान पंडित होता है १९

अधनेनार्थकामेन नार्थः शक्यो विवित्सता अर्थैरर्थो
निबध्यंते गजाइव महागजैः २०

हे राजन् जो पुरुष अधन है किसी अर्थको सिद्ध करणावाहे उसने

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
२१

किसीकार्यका अर्थभी सिद्धकरण शक्य नही होता अपने पास
अर्थ होवे तबही सर्वकार्योंके अर्थ समृद्ध होताहै जैसे अपनीपा
स किसीको गज होवे तो उनके प्रसंगसे वनके महागजभी वश॰
होताहै २०

धर्मःकामश्च हर्षश्च धृतिःक्रोधः श्रुतं मदः अर्थादेता
निसर्वाणि प्रवर्तन्ते नराधिप २१

हे नराधिप धर्म और काम और हर्ष और धैर्य और क्रोध और शास्त्रश्रव
ण और मदके कार्य यह सभही अर्थसेही प्रवृत्त होतेहै २१

धनात्कुलं प्रभवति धनाद्धर्मः प्रवर्तते नाधनस्यास्त्ययं
लोको नपरः पुरुषोत्तम: २२

आप पुरुषोंविषे उत्तमहो यह निश्चयकरो धनसे कुल उत्तम हो।
ताहै धनसे धर्म बढताहै अधन पुरुषको इहलोक नही ब।
नता २२

नाधनो धर्मकृत्यानि यथावदनुतिष्ठति धनाद्धर्मः प्र
भवति शैलादपि नदीयथा २३

अधन पुरुष जोहै सो धर्मकार्योंको यथाविधि नही करसकता
धनसेही धर्म होताहै जैसे पर्वतसे नदी प्रवृत्त होतीहै २३

यःकृशाश्वः कृशगवः कृशभृत्यः कृशातिथिः सवैरा
जन्कृशोनाम नशरीर कृशःकृशः २४

हे राजन् जो पुरुष कृशाश्व है स्वल्प घोडेवालाहै जिसकी स्वल्प गो
धन है सो कृशगव है जिसके स्वल्प भृत्य है सो कृशभृत्य है जिसके
अतिथि याचक स्वल्पलोक है सो कृशातिथि है ऐसे पुरुषको स
भलोक कृश मानते है जो शरीरसे कृश है उसको कृश नही मानते २४

अवेक्षस्व यथान्यायं पश्यदेवासुरं यथा राजन् किम
न्यज्ज्ञातीनां वृधाद्वृध्यन्ति देवताः २५

आप यथायोग्य दृष्टान्त न्यायकरके विचारो जैसे देवासुर न्यायको
देखो देवता जोहै सो अपने जातिबांधवोंके वधविना क्या राज्य
ऋद्धीको प्राप्तभये है २५

नचेद्धिंसा मन्यस्व कथंतद्धर्म मावेदन् एतावानेव वे
देषु निश्चयः कविभिः कृतः २६

जो किसीको नहि हिंसा करणी सो वेदधर्मका कैसे आचरणबने
वेदोंविषे यज्ञादि धर्मकर्मका हिंसामात्रही आचारकविलोकोने प्र
णाम किया है २६

अधीतव्या त्रयी नित्यं भवितव्यं विपश्चिता सर्वथा धन
माहार्यं यष्टव्यं चापि यत्नतः २७

धर्म अर्थ कामको सिद्धकरणेहारी वेदत्रयी अवश्य अध्ययन कर
णे योग्य है इसके साधन सामग्रीके उपाय करणेको चतुरता क
रणे योग्य है इसके वास्ते सर्वप्रकारसे धनसंग्रह करणे योग्य है
बहुत धन करके यज्ञ कर्तव्य है २७

द्रोहाद्देवै रवाप्तानि दिविस्थानानि सर्वशः द्रोहात्किम
न्यज्ज्ञातीनां गृध्यंते येन देवता २८

देवतालोकोंने असुरोंके द्रोहसे स्वर्गमें सभही स्थापन पाई है
और अपने बंधुजनोंसे इतर और क्या किया है जिसकरके देवता
ऋद्धिको प्राप्त भये है २८

इति देवा व्यवसिता वेदवादाश्च शाश्वताः अधीयंते ध्या
पयंते यजंते याजयंति च २९

इसप्रकार देवता असुरोंके द्रोहको सदा उद्यम करते हैं वेदवाद
भी इसीप्रकार सदा सिद्ध वर्ती है इसी वास्ते वेदशास्त्रोंको पढते
है और पढावते भी है द्रोहवास्ते यज्ञ करते है और याजन भी
करावते है २९

कृत्स्नं तदेव तच्छ्रेयो यदद्य उपपद्यते न पश्यामोऽन
पकृतं धनं किंचित्क्वचिद्वयं ३०

सर्वप्रकारका सर्वप्रयत्नसे सर्वत्र हमने सर्वकल्याण देखा है
जो अन्य जातीसे अन्य पुरुषसे जोकुछ धनमात्र ग्रहण करना
ऐसा धनका उपाय नहीं देखा जिसमें परके प्रीति हानि अपका
र जिसमें नहीं है ३०

एवमेव हि राजानो जयंति पृथिवी मिमां जित्वा ममेयं
ब्रुवते पुत्रा इव पितुर्धनम् ३१

इसीप्रकार राजालोक परधनके हरणेवासे पृथिवीको विजि
जय करते है परभूमिको हरकरके कहते है हमने यह भूमि जी
ती है इसविधि अपने पिताके धनसमान अपनी ममता करते है १

राजर्षयो जितस्वर्गा धर्मो ह्येषां निरुच्यते यथैव पूर्णा
दुदधेः स्यंदंत्यापो दिशो दश ३२

इसप्रकार पृथिवीके जयवाले राजा स्वर्गको प्राप्त भये है यही धर्म
मार्गका अर्थ कहा है इसी क्रमसे सर्वत्र धर्मकर्म प्रवृत्त होते है जैसे
पूर्ण समुद्रसे दशदिशाको जलसमूह जाते है ३२

एवं राजकुलानि विनं पृथिवीप्रति निष्ठति आसीदि
ये दिलीपस्य नृगस्य नहुषस्य च २३
ऐसे विजयरूपी धर्म करके राजकुलस पृथिवीको प्रतिष्ठाक
रतेहै इसीप्रकार राजा दिलीपको धनभयाहै नृगराजाके
धनभयाहै नहुषराजाके धनभयाहै २३
अंबरीषस्य मान्धातुः पृथिवी सा त्वयि स्थिता सम्यग्
व्यसेयायज्ञः सदामः सर्वदक्षिणः २४ नेचेत्र यजस
राज त्वामस्तु राज किल्बिषं २५
इसी प्रकारसे अंबरीषराजाके धनभयाहै और मान्धाताको
भी इसीप्रकार धनभयाहै सोई पृथिवी शत्रुजय करके तोको
प्राप्त भई है सोई यह पृथिवीरूप द्रव्यमय यज्ञतोको प्राप्त भ
याहै कैसाहै सर्वप्रकार द्रव्यदक्षिणा इसकी फलहै २४ इस
विषे रक्षाविना जो पापकर्म होवेगा उसका दोष तोको हो।
वेगा २५
येषां राजाश्वमेधेन यजते दक्षिणावता उपेत्य तस्या
वभृथे प्रजाः सर्वे भवन्ति ते २६
जिस पृथिवीका राजा प्रजासे धनलेकर अश्वमेध करके यज्ञ
करताहै सभही सो प्रजालोक यज्ञान्तस्नान विषे अपने २
धनाजेन दोषसे पवित्र होतेहै २६
विश्वरूपो महादेवः सर्वमेधे महामखे जुहाव सर्वभू
तानि तथैवात्मान मात्मना २७
विश्वरूप करके स्वल्प महादेव ब्राह्मण भयाहै सो सर्वप्राणी व
धवाले सर्वमेध यज्ञ करताभया उसयज्ञ विषे सर्वप्राणिवध
विषे ब्राह्मणवधभी करताभया पश्चात् अपने शरीरकोभी
होम करताभया सो ब्राह्मण हत्याको और आत्महत्या दोष
को तरगयाहै तो शत्रुवध करके विधका द्रव्यहरणसे तोको
क्यादोष भारी होताहै २७
शाश्वतोयं भूतिपथो नास्यान्तमनुशुश्रुम महान्दाश
रथः पन्था मारा जन्नु रूपस्थितः २८
हे राजन् यह यज्ञादि धर्मकर्मका मार्ग सनातन बनाहै कैसा
है दाशरथहै इसके दशअंगहै एकतो यज्ञका पशुहै १ एक य
जमान २ यजमानकी पत्नी ३ तीनवेद ४ ऋत्विजा १० द्रव्य

संपदाकी उपार्जना उसकामुख्य मार्गहै इसके श्रवणके अंतको इसनहीं श्रवणकरती ऐसे यज्ञकर्मकर्के सर्वपापोके दोषकी शांति होतीहै इसको त्यागकर्के तुमवनवासवास्ते सर्वत्यागरूपी कुमार्गको मतसेवनकरो ३८

इति श्री राजधर्मे अर्जुनवाक्य मष्टमोध्यायः ८

इति श्री राजधर्मे अर्जुनवाक्य मष्टमोध्यायः ८

युधिष्ठिरउवाच मुहूर्तेनावैकाग्रो मनः श्रोत्रेंतरा
त्मनि धारयस्वेति तत्क्षणा रोचत वचनं मम १

हे अर्जुन तू एक मुहूर्तमात्र प्रथम एकाग्रस्थितिकर मनको और श्रोत्र इंद्रियोंको अपने आंतरीय आत्माविषे विचारवास्ते स्थितकर्के मेरेवचनको धारणकर जबतोको अंतमुख दृष्टहोवेगी तब हमारा रुचिकरेगा अंतमुखकोही निवृत्तमार्ग रुचिकरताहै वहिर्मुखको नहीं प्रीति करता १

साधुगम्य महंमार्गं नजान त्वत्कृते पुनः गच्छेयंत
गमिष्यामि हित्वा ग्राम्य सुखोत्सुत २

साधुजनोको जो गंतव्य मार्गहै उसकोत्यागकर्के तुम्हारे कहे वचन वास्ते ग्राम्यभोगके मार्गमो मैनहीजाता ग्राम्यभोगके इंद्रियसुखोको त्यागकरके मै वनको नही जावेगा २

तेभ्यश्चैकाकिना गम्यः पंथाः कोस्तीति पृच्छमा
अथवा नेच्छसि पृष्टुः मत्पृच्छत्वपि मे शृणु ३

हे अर्जुन जोतोकी मेरावचन श्रवणकरणेकी वांछाहै तो मोको ऐसी पृछाकर एकाकी पुरुषने कौनसा मार्ग गंतव्यताको एकहै जो तू मोको अपृछाकर्के वहिर्मुखतासे पृछाकरता तो तेरे वचनके उत्तरवास्ते मैं आपकहताहूं उसको श्रवणकर ३

हित्वा ग्राम्य सुखाचारं तप्यमानो महत्तपः अरण्य
फल मूलाशी चरिष्यामि मृगैः सह ४

मैतो ग्राम्य भोगके सुखाचारको त्यागकरके महातप करताहूं और वनके फलमूल भोजन कारके मृगोंके साथ विचारोंगा ४

श्री० अहान्तोऽग्नि यथाकाल मुभौ कालावुपस्पृशन् कृश :
रा० प० परिमिताहारः सुमैः वीरजटाधरः ५
टी० अग्निहोत्रके समयमें अग्निको होमकरताहै प्रातःकालसायं
११ कालमें स्नानकरेगा तपकर्के कृशशरीरकर्के स्वल्प आहार
करताहु मृगचर्म भूर्जपत्रके वस्त्र जटाधारण करेगा ५
शीतवाततपसहः क्षुत्पिपासा श्रमक्षमः तपसा
विधिदृष्टेन शरीरमुपशोषयन् ६
शीतवात धामको सहारण हारा और क्षुधापिपासाके श्र
मको सहारेगा विधीसे कहे तपकरके शरीरको शो
षकरताहू ६
मनःकर्णसुखा नित्यं शृण्वन्नुच्चा वचागिरः मुदि
ताना मरण्येषु वसतां मृगपक्षिणां ७
और वनवासी मुनिजनोंकी कथाहै स्वल्प विस्तारवालीयां
मनको कर्णको सुखकरणेहारी उनको श्रवणकरता
हुवा नानारूपधारी मृगपक्षियोंके मधुर आलापोंकोभी
श्रवण करेगा ७
आत्तिष्ठन् पेशलानां धान फलानां पुष्पवीरुधां ना
नारूपान् वनेपश्यन् रमणीयान् वनौकसः ८
और वनके जो वृक्षपुष्पहैं सो प्रफुल्लितभयेहैं तिन्होंके मे
द समयमें तिन्होंको सेवनाहुआ नानारूपधारी वनवा
सी वानप्रस्थ लोक तिन्होंकोभी देखताहु ८
वानप्रस्थ जनस्यापि दर्शनं कुलवासिनां नप्रिया
एयाचरिष्यामि किंपुनग्रामवासिनां ९
वानप्रस्थ जो वनवासी जनहै तिन्हके दर्शनको करताहुं
वहुर उन्हके अप्रियनहीं करता जो ग्रामवासी जनोंका अ
शुभ कैसी करेगा ९
एकान्तशीली विमृशन् पक्वापक्वेन वर्तनं पित्त्न्
देवांश्च वन्येन वाग्भिरद्भिश्च तर्पयन् १०
अथवा मे इकेलाही एक २ वृक्षके तलु एक २ रात सेवनकुर्के
फलमूलादि पक्व अथवा अपक्व उसकर्के देहपोषणकरेगा
पितरोंको देवगणोंको वानीयजनकर्के जलादि तर्पण नमस्क
रेगा १०

एवमारण्यशास्त्राणां मुख्यमुग्रतरं विधिं सेवमानः
प्रतीक्षिष्ये देहस्यास्य समापनम् ११
इसप्रकार अरण्यवासकी शास्त्रोंकी अतिउग्र विधिको सेव
नकर्के इसदेहकी समाप्तीहै उसको देखलेवौंगा ११
अथवा सोहमेकाहमेकैकस्मिन्वनस्पतौ चरन्भै
क्ष्यं मुनिर्मुंडः क्षपयिष्ये कलेवरं १२
अथवा मै एकाकी होकर एक२ वृक्षविषे भिक्षाहूतिकर
ताभया मौनधारी मुंडितहोकर देहको कालक्षेपन करौं
गा १२
पांसुभिः समभिच्छन्नः शून्यागार प्रतिश्रयः वृक्ष
मूल निकेतो वा त्यक्तसर्व प्रियाप्रियः १३
अथवा भूमिशय्याको वह्नत धूलीकर्के लिपटाहुआ शून्य
मंदिरके आश्रयकरौंगा अथवा वृक्षमूलविषे वासकरौंगा
सर्वकालविषे सभके प्रिय अप्रियको त्यागकरौंगा १३
नशोचन्न प्रहृष्यंश्च तुल्यनिंदात्म संस्तुतिः निराशी
र्निर्ममो भूत्वा निर्द्वंद्वो निष्परिग्रहः १४
नमैं शोचकरौंगा नहर्षकरौंगा निर्ममहोकर निर्द्वंद्व और निस्पृह
होकर कालक्षेपना करौंगा १४ निराशा
आत्मारामः प्रसन्नात्मा जडांधबधिराकृतिः अकुर्वा
णः परैः कांश्चित्संविदं जातुकैरपि १५
वहद आत्मयोगकर्के आत्मविचारविषे रमणमाण होवौंगा सदा
प्रसन्नचित्तहोकर जडोंकी अंधोंकी वहरेकी तरां अपनाको
करौंगा किसीनिमित्तकर्के किसीके साथभी गोष्ठी नहीकरौ
गा किसीका कोई कृतमाको नहीनहीकरेगा १५
जंगमाजंगमान्सर्वान्नविहिंसंश्चतुर्विधान् प्रजाः
सर्वाः स्वधर्मस्थाः समः प्राणभृतः प्रति १६
स्थावर जंगम येते चतुर्विध प्रजासो अपने स्वभावके धर्मवि
षे स्थित प्राणधारी प्रजाहै तिन्हको समदृष्टि करदेखौंगा १६
नचाप्यवहसन्कंचिन्न कुर्वन्भ्रुकुटीः क्वचित् प्रसन्न
वदनो नित्यं सर्वेंद्रिय सुसंयतः १७
ना किसविषे हास्यकरौंगा नकोपकर्के भृकुटीमुख होवेगा

श्री०
रा० य०
टी०
१४

२५

सदाप्रसन्न वदनताकर सर्वइंद्रोंके संयम संयुक्त रहोंगा १६
अदृष्ट्वा कस्यचिन्मार्गं अज्ञनेनैव केनचित् न देशं न
दिशं कांश्चिद्गन्तु मिच्छन्विशेषतः १७
किसीको किसी मार्ग अज्ञाको नहीकरोंगा येनकेन मार्गकर्कै
अटनकरोंगा न किसी देशको न किसी दिशाको गमनेच्छा करो
गा विशेष इच्छाकही नही करोंगा १७
गमने निरपेक्षश्च पश्चादनवलोकयन् ऋजुः प्र
णिहितो गच्छ समस्थावर वर्जकः १८
निरपेक्षही गमनकरोंगा पश्चात्दृष्टिनकरोंगा सूधेमार्गही
अनन्यस्वहोकर भयादिरहित सूक्ष्मशरीरकी अवस्थाकरोंगा
और शरीरकी चेष्टाको विस्मरणकरके अहंता ममता शून्य
होवेंगा १८
अल्पंवा स्वादु भोज्यंवा शर्वलाभेन जातवित् अपे
क्षपिवरं लाभ मलाभे समदर्शयन् १९
हे अर्जुन स्वल्पहोवे वहुतहोवे स्वादिष्टहोवे वा नही स्वादि
ष्टहोवे शर्वले गृहस्थ गृहमो जैसा प्राप्तहोवे भोज्यपदार्थ उ
सककें देह पोषणमें करोंगा जो शर्वले गृहमों नहिमिला
तो अवर गृहविषे विचरोंगा जो कदाचितनही प्राप्तभयातो
प्राप्त संतोषकर्के उदरपूरणाकरोंगा १९
विधूमेन्यस्त मुसले अंगारे भुक्तवज्जने अतीत पा
त्रसंचारे काले विगत भिक्षुके २०
अव भिक्षा कालके निश्चयको कहतेहै जव गृहस्थोंका गृह
पाकशालाके धूमरहित होवेगा और उखल मुशलका अ
न्नको सुधारके त्यागदेवेंगे पाकाग्निअंगारभी शांतहोजावेगा
गृहवासीजन भोजनकरलेवेंगे और पाकपात्रोंका संचार गृह
ण मार्गमेंरहित होजावेगा २०
एककाले चरेद्भैक्ष्यं त्रीनथ द्वेव पंचवा स्पृहापाशं
विमुच्याहं चरिष्यामि महीमिमाम् २१
और भिक्षलोकभी भिक्षालेजावेगे उसकालविषे एक ग्रास
तीनग्रास अथवा पंचग्रास पर्यंत भिक्षाकरोंगा सर्वप्रकार
की तृष्णात्यागकर्कै इसपृथिवीको पर्यटन करोंगा २१

अलाभे मति वा लाभे समदर्शी महातपाः नजि
जीविषुर्वत्किंचि न्नमुमूर्षुर्वदाचरन् २४
भिक्षाके लाभविषे अथवा अलाभविषे दाता अदाता जन
विषे समदर्शी मनका संयमरूपी महातप करेगा न
जीवनकी इच्छा करेगा मारणकी इच्छा रहित जैसे आ
चारको करेगा २४
जीविते मरणे चैव नाभिनंदन्न च द्विषन् वास्यैकं
नत्तो बाहुं चंदने नैक मुक्षतः २५
जीविनेको मरणेको न स्तुति करेगा न निंदा करेगा एक
भुजाको न तो जो काष्ठ छेदने हारा उसकर्के छेदा जावे एक
भुजाके चंदनकर्के सिंचन करे तो भय शोक आनंद हर्ष र·
हित होता है २५
नाकल्याणं न कल्याणं चिंतयन्नुभयोस्तयोः याः
काश्चिज्जीविताशकाः कर्नेम भ्युदयक्रियाः २६
न अकल्याणको त्यागना कल्याणकी वांछा दोनोंकी चिंत
न रहित होता हूं जो जीवनेकी उत्सव क्रिया कर्नेमनाको
शका है उनके संगको त्याग करता हूं २६
सर्वाल्लाः संपरित्यज्य निमेषादि व्यवस्थिताः २७
सर्व प्रकारकी जेती क्रिया हैं तिन्हको त्यागकर्के हर्षशो
कलाभ अलाभादि सर्वकालनादि अवस्थाको त्यागकर
ता हूं २७
नेष्ठु नित्य समस्तेषु त्यक्तसर्वेंद्रिय क्रियः अपा
स्तिमनः संकल्पः मुनि मुक्तात्म कल्मषः २८
जैसे खानपानादि संकल्प विकल्प हैं तिन्हों विषे शरीर नि
र्वाहमात्र कर्मविषे स्थित भया और सर्वप्रकारकी क्रिया
विषे असंग और संकल इंद्रियोंके क्रियाके प्रसंगको त्या
गकर्के वह उमनको इंद्रियोंकी वृत्तियोंसे संकल्परहित क
रता हूं मुनि होकर सर्वप्रकारका वासनारूपी पाप तिसने
हर किया है २८
विमुक्तः सर्व संगेभ्यो व्यतीताः सर्वबाधकाः न
वशे कस्यचित्तिष्ठ न्न मयमी मानविष्मनः २९
सर्व प्रकारके पापकर्मोंसे विमुक्त होता हूं और प्रकार·

श्री॰
ग॰ प॰
टी॰
२५

की स्नेह श्रृंखला जिसकी विनीत भई है इसप्रकारकी किसीका भी वशवर्ती नहींहोता पवनके समान सभसे असंग और सर्व गत है २९

वीतरागश्चरेय्यं नहि प्राप्स्यामि प्राप्स्यती महत्याया हि महत्पाप मज्ञाना हमिकारितः ३०

वीतराग होकर लोकविषे विचरताहूं परम उत्तम अखंड नित्य शिको प्राप्त होताहूं यह ऐसा महापाप मूलहै इसने जो मेरे पाप करवायाहै सो अज्ञानसे पापकर्मविषे मोको जो प्रवृत्त कियाहै ३०

कुशलाकुशलाभ्येके कृत्वा कर्माणि मानवाः कार्यकारण संश्लिष्टे स्वजने नाम बिभ्रति ३१

हे अर्जुन एकप्रकारके जो मूढलोक हैं कुशलकर्मको अकुशलकर्मको करके जिन्होंने अपने सुखवास्ते स्नेह कियाहै पराये सुखवास्ते नहि स्नेह किया सो पुत्रादि अपने संबंधी जनोंको पोषण पालनवास्ते यत्नकरते है सो पुत्रादि जो प्रेम करतेहै अपने सुखवास्ते करतेहैं भर्तादिकोंके सुखवास्ते नहि करते ३१

आयुषोन्ते प्रहायेदं क्षीणप्राणं कलेवरं प्रतिष्ठ हाति तत्पाप कर्तुः कर्मफलं हि तत् ३२

जब इसप्राणीकी आयुषाका अंत होताहै तब यह प्राणीप्राणोंकि क्षीणतावाले कलेवरका त्यागकरके सो पुत्रादि पोषणवास्ते पाप कियाहै उसका पापकर्ताही ग्रहणकरता है उसीको पापकर्मोका फल होताहै ३२

एवं संसार चक्रेस्मिन्व्याविद्धे रथचक्रवत् समेति भूतग्रामोयं भूतग्रामेण कार्यवान् ३३

इसप्रकार इस संसार चक्रविषे रथचक्रकी न्याई सर्वप्राणीगण जो है कर्मजाल मोहजालकरके बांधाहै सो सब ई भूतग्राम अपनी कार्यवालाहै ३३

जन्ममृत्यु जराव्याधि वेदनाभि रभिद्रुतं अपार मिव चास्य संसार त्यजतः सुखम् ३४

जन्ममरण जराव्याधिके उपद्रव वालाहै इससंसारविषे दुःखकी व्याकुलता अपार बनीहै इसको त्यागकरनेहारेको परम सुख होताहै ३४

दिवः पतन्त देवेषु स्थानेभ्यश्च महर्षिषु कोहि
नाम भवेनार्थी भवेत्कारण तत्त्ववित् २४
इसी प्रकार का स्वर्ग विषे है पुण्यकारी भूलोके शरीरभी स्वर्ग
भोगके अंतमो स्वर्गसे पडते है और महाऋषिभी ऋषिलोकु
से तपस्याके फलके अंतमो पडजाते है तांते विचारवान् को
तुच्छ वहे उनका अर्थी न होहोवे यो विचार भोग पदार्थोका
अर्थी कोई नहीं होवे येनकेन प्रकारेण कार्यकारणतत्त्वके त
त्वविचारवान् होवे २४
कृतानि विविधं कर्म तत्तद्विविध लक्षणं पार्थि
वै नृपतिः स्वल्पैः कारणै रेव बध्यते २५
हे अर्जुन जो पृथिवी का महाराज है सोभी तुच्छ राजो लोको
ने सामदानादि नाना प्रकारकु कपटकर्मकर्के बांधाजाता है
महाराजाने कनिष्ठ राजा लोकोका अवमानादिक किया है सो
सभही निकृष्ट राजा लोक मिलकर्के इकेले महाराजको पक
डलेते है पिपीलिका सर्पन्याय जैसा होइ बनजाता है २५
तस्मात्प्रज्ञामृतमिदं चिरान्मां प्रत्युपस्थितं तत्प्रा
प्य प्रार्थये स्थान मव्ययं शाश्वतं ध्रुवं २६
तांते यह विचाररूपी अमृत मोको चिरकालसे प्राप्त भया है
इसको पाइकर्के अव्यय अक्षर सदा वर्तमान ऐसे मोक्षस्थान
को वांछा करताहूं २६
एतया सततं वृत्त्या चरन्नेवं प्रकारया जन्ममृ
त्यु जराव्याधि वेदनाभि रभिद्रुत देहं संस्थाप
यिष्यामि निर्भयं मार्गमास्थितः २७ इति श्रीम
हाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे युधिष्ठिरवा
क्यंनाम नवमोध्यायः ९
विचारकर्के ऐसे मोक्षस्थानको धैर्यमोको प्राप्त भया है इस
कर्के सर्वत्यागकर मैं विचारताहूं इसकर्के जन्ममरण ज
राव्याधि पीडासे रहित मार्गको पाइकर दृढस्थितिकर्के
देहको प्रारब्धकी समाप्तिमो त्यागकरताहूं २७ इति श्री
महाभारते राजधर्मे युधिष्ठिरवाक्यं नाम नवमोध्यायः ९

श्री. ग. प. टी. २५

26

भीमसेन उवाच श्रोत्रियस्येव ते राजन्‌ मंदकस्या
विपश्चितः अनुवाक हता बुद्धि र्नैषा तत्त्वार्थदर्शिनी १
भीमसेन उवाच हे राजन्‌ तेरी बुद्धि कैसी है वेदपाठी श्रोत्रिया
की बुद्धि के समान है वेदपाठी को अर्थज्ञान नहीं होता तो ते
मंद बुद्धि होता है अर्थज्ञान विना केवल मंत्रपाठ के अनुवाक
विभाग जानता है तत्त्वविचार विना जैसी उसकी बुद्धि नष्ट हो
ती है तैसी तेरी बुद्धि भी नष्ट भई जैसी है १
आलस्ये कृतचित्तस्य राजधर्मान सूयतः विना
शो धार्तराष्ट्राणां किं फलं भरतर्षभ २
तैने आलस विषै ही चित्त को सदा निश्चल किया है परमार्थ
मो श्रद्धा नहीं किया जो तसा तू राजधर्म को अनादर करता है
तो धृतराष्ट्र के पुत्रों को विनाश का का फल हम को बताता है २
क्षमा अनुकंपा कारुण्य मानृशंस्य न विद्यते त्वा
त्र मावरतो मार्ग मपिवयो स्त्वदंतरे ३
हे राजन्‌ क्षमा जो है अपराध सहारणा अनुकंपा जो है पर
दुःखनिवृत्ति वांछा कारुण्य जो है परदुःखदर्शन मों मन की
दीनता आनृशंस्य जो है अक्रूरता यह चारो राजधर्म के आच
रण मो अपने वंधु के प्रति भी तुम से भिन्न और किसी मों न
ही है ३
यदी मा भवतो बुद्धि विद्याम वयमीदृशं शस्त्रं
नैव ग्रहीष्यामो नवधिष्यामि कंचन ४
जो हम तुम्हारी इस प्रकार की बुद्धि को प्रथम जान लेते
तो हाथ मो शस्त्र को ग्रहण नहीं करते और किसी को भी
नहीं रण मो मारते ४
भैक्ष्यमेवा चरिष्यामः शरीरस्या विमोक्षणा
त् न वेद दारुणं युद्ध मभविष्यत्‌ महीक्षितां १
शरीर के प्राण मोक्ष पर्यंत भिक्षाचरण ही करते और ऐ
सा सर्वक्षयकारी युद्ध राजा लोकों का नहीं होता १
आणस्या न मिंदसर्व मितिवै कवयो विदुः

स्थावरं जंगमं चैव सर्वं प्राणस्य भोजनम् ६

हे राजन् क्षत्रधर्मके निश्चयवाले कविजनोंका यह मत प्रमाण है जो बलवान् प्राणधारी है उसको संपूर्ण पृथिवी अन्न के समान भोजनरूप है वीरभोग्या वसुंधरा ऐसे स्मृतिवाक्य से स्थावर जंगम जो पदारथ है सो सब ही बलधारी प्राणी का भोक्तव्य भोजन बना है ६

आददानस्य चेद्राज्यं ये केचित्परिपंथिनः हंतव्यास्त इति प्राज्ञाः क्षत्रधर्मविदो विदुः ७

जो राजा अपने राज्यको ग्रहण करणेकी वांछा करता है उसके जो जो राज्यापहारी शत्रु होवे सो उसने सर्वप्रकारसे हंतव्य है यह सिद्धांत है इसको चतुर जो क्षत्रधर्मके सो जानते है ७

ते सदोषा हताऽस्माभी राज्यस्य परिपंथिनः तान्हत्वा भुंक्ष्व धर्मेण युधिष्ठिर महीमिमां ८

जो ते धृतराष्ट्रके पुत्र हमारे राज्यापहाररूप महादोष संयुक्त है महाशत्रु है उन्हको मारकरके अपने धर्मकरके हे युधिष्ठिर इस पृथिवीको तुम निःशंक होकर भोग ८

यथा हि पुरुषः खात्वा कूपमप्राप्य चोदकं पंकदिग्धो निवर्तेत कर्मेदं नस्तथोपमं ९

जैसे कोई पुरुष जलके वास्ते कूआ खोदकरके जलकी प्राप्ति विना पंकसे लिपटकर बहुत जलपानके उद्यमसे निवृत्त होजावे तैसा त्यागरूपी तेरा यह कर्म बना है ९

यथारुह्य महावृक्षमपहृत्य ततो मधु अप्राप्य निधनं गच्छेत्कर्मेदं नस्तथोपमम् १०

जैसे कोई पुरुष फलभोजनकी वांछा करके महावृक्षको आरोहण करके उस वृक्षसे मधु ग्रहण करके पश्चात् आपही मर जावे तैसा मेरा यह त्यागरूपी कर्म होता है १०

यथा महांतमध्वानमाशया पुरुषो व्रजन् स निराशो निवर्तेत कर्मेदं नः तथोपमम् ११

जैसे पुरुष धनकी आशा करके महा कठिन मार्गको जा

नाहै यनप्राप्तिकालमें आपहि निराश होकरकै निहत्त होजावे
तैसा तेरा यह कर्तव्य वना है ११

यथाशक्त्या यातयित्वा पुरुषः फलं नेच्छन आत्मा
ने ज्ञातयेत्तथा कर्मेदं न त्वत्योपमम् १२

जैसे तृषापीडित पुरुष यत्न करकै यज्ञको प्राप्त होकर अपने मु
फलासे भोजन न होकरे और जैसे कामी पुरुष सुंदर युवती स्
त्रीको प्राप्त होकर नहीं भोगे तैसे यह तेरा निश्चय वना है १२

यथार्त्ते तृषितो लब्ध्वा न भुंजीयाद्यदृच्छया कामी
व कामिनीं लब्ध्वा कर्मेदं न त्वयोचितम् १३

हे राजन् इहां तेरा दोष नहीं है तुमारा ऐसा स्वभाव पूर्वसे
वना है दोष रहा हमारा है हमही निरायोग्य है जो ऐसे मंद
बुद्धि तेरेको अपना ज्येष्ठ भ्राताको राजा मानकर तेरे आज्ञा
कारी होती है १३

वयमेवात्र गर्ह्या हि यद्वयं मंदचेतसं त्वां राजन्न
नुगच्छामो ज्येष्ठाय मिति भारत १४

हम तो अतिवाहुवल सयुक्त है और शस्त्रविद्याके अभ्यास
करणे हारा है और सर्व पृथिवीके जयकी मनसावाली है
कायर जैसे तेरे जैसे राजाके वाक्यमो निष्ठा करते है जैसी
आपभी अशक्त पुरुष असक्त राजाके वाक्यको प्रमाण क
रता है १४

अग्नीकं गनीनस्मा ह्यष्टार्थो नर्थसिद्धये कथं
वे नानुपश्येयु जेनाः पश्यंत यादृशम् १५

हे जना हे लोका हमके सीहै अगती जो लोक है अनाथ ति
न्होंके गतीवने है रक्षा करणे हारे है अनाथ रक्षा करना है
अर्थ सिद्धिवास्ते जत्न करणे हारी और देवगनीकरकै इस
राजाकी कायरतासे नष्टार्थ भये है जैसे हम नष्टार्थ भये
है ऐसे कायरवाले पराक्रमी जनोको नष्टार्थको नहीं दे
खते ताते जो वलवान समर्थ पुरुष होवे तिन्होंने स्वार्थ सि
द्धिवास्ते अवश्य यत्न कर्तव्य है १५

आपत्काले हि संन्यासः कर्तव्य इति शिष्यते जरा
याभिपरीतेन शत्रुभिर्व्यंसितेन वा १६

यह हमारा राजा संन्यास ग्रहणकी वांछाकरताहै संन्या
सतो अपने यत्नकी हानिवाले आपत्कालमो कर्त्तव्यहै
अथवा नराजनेर वृद्धपुरुषको अनंतर संन्यास कर्त्तव्यहै १६
तस्मादिह कृतप्रज्ञा स्त्यागेन परिवर्त्तते धर्म्म
मतिक्रमनैव मन्यंते सूक्ष्मदर्शिन: १७
जौनसा पुरुष राज्यपीडाकर्के अधाकाहै उसने अपनी सा
मर्थ्यमो कपटाचरणसे संन्यासकर्त्तव्यहै वास्तव संन्यास
राजधर्मविषे नहीकर्त्तव्यहै १७
कथं तस्मात्समुत्पन्ना स्तन्निष्ठा स्तदुपाश्रया:
तदेव निंदां भाषेयु र्धाता तत्र नगर्ह्यते १८
ताते जो कुशलबुद्धि राजाहै तिन्हको संन्यासनहीकरा
है राजाके संन्यासकर्के धर्मका उलटपलट होताहै इसी
हेतुसे संन्यासधर्म ब्राह्मणोकी मुख्यहै याते शमदमादि
धर्म ब्राह्मणकोहै क्षत्रीको वैश्यादिकोको सूरतादि अप
ना धर्महै ताते क्षत्री वैश्यादिकोको संन्यासरूपी वैराग्य व
नना धर्मनहीहै यह सूक्ष्म विचारवाले पंडितोको मत·
है १८
श्रियाविहीनैरधनै र्नास्तिकै संप्रकीर्तितं वे·
दवादस्य विज्ञानं सत्याभास मिवानृतम् २०
हेराजन् तू हिंसारूपी अपने धर्मको क्यौं निंदाकरताहै
हमतो हिंसाप्रधानक्षत्रधर्मसे उत्पन्नभयेहै हिंसाप्रधान
धर्मकी निष्ठावालेहै हिंसाप्रधान धर्मक्षत्र हमाराजीव
नका आश्रयवनाहै उसकी निंदाको हमकैसेकरैंगे इ
सकी निंदायोग्य सृष्टिकर्त्ता विधाताहै उसको निंदा क्यौं
नही करते १९ जोतू कहै संन्यासधर्म हमको क्यौं नही
कर्त्तव्यहै जाबालि उपनिषत्त विषे संन्यासकहाहै इसी
कर्के जडभरतादि राजालोकभी संन्यासकरतेभये तो
उत्तर कहतेहै जो पुरुषधर्मार्थकामसाधक त्रयीविद्या
से हीनहै और संपदाराज्यहीन अधमपुरुषहै सो नास्ति
कजैसे तिन्होने वेदवादका विज्ञानमानाहै वेदविधि।
को अर्थवादकर्के कहाहै यह ऐसावाद सत्यधर्मका आ
भासमात्रहै मिथ्यावादहै

श्री·
ग· य·
टी·
२८

शंकांत मौढ्य मास्थाय विध्वलात्मा न मात्मनः
धर्मच्छद्म समास्थाय च्यवितं नतजीवितं २१
जो तुमने कहा मैं एकाकी सत्नुमार्ग कर्के हिंसादि रहि
तहोकर वनविषे ऐसा अपना सन्यास धर्म कहा है सो·
तो जोपुरुष अपने देहको आपही पालनकरता है निश्च
लस्थिती करता है सो तो धर्मत्यागकर्के कपटयोगको क
रता है केवल त्यागकर्के किसीको देहधारण नहीं बन
ता उसका उपयोगकर्के जीवन उपायविना शरीर नाश
होता है २१
शंके पुनररण्येषु सत्व मेकेन जिवितं अवि·
धाता पुत्रपौत्रा न्देवर्षीन तिथीन्पितृन् २२
जो तुमने कहा है एकाकी पुरुषवनविषे सत्वका जीव
ता है शरीरयात्रा स्वभावकर्के वालकेको स्तनपानप्रवृत्ति
समान आपही वनजाती है उत्तर सुनो एकाकी वनविषे·
सो जीवे पुत्रपौत्रादि पालनरूपी अपने धर्मकर्के नकर
सके और देवता ऋषि पितर और अतिथि जिससे नहोषण
लेजावे ऐसी स्थितिकर्के धर्मकर्मका लोपहोता है २२
नैमे मृगाः स्वर्गजितो न वराहा न पक्षिणः अ
थामेव प्रकारेण पुण्यमाहुर्नतेजनाः २३
जो वनवासकर्के स्वर्गादिगति होती है तो वनविषे मृग
जो है वराह जो है पंछी भी है उनको एकाकी वासकर्के क्यों
नही स्वर्गादिगति सिद्ध होवेगी २३
यदि संन्यासतः सिद्धिं राजन्कश्चिदवाप्नुयात्
पर्वताश्च द्रुमाश्चैव क्षिप्रंसिद्धि मवाप्नुयुः २४
जो काष्ठ मौन संन्यासकर्के मोक्षगति होती है तो पर्वत वृ
क्षादिक काष्ठ मौन समाधी वाली है सो क्यों मोक्ष सिद्धि
को नहीपावते २४
एते हि नित्यसंन्यासा दृश्यन्ते निरुपद्रवाः अपरि
ग्रहवंतश्च सततं ब्रह्मचारिणः २५

हे राजन् पर्वत वृक्षादिक योहै सो यह निश्चही संन्यासनिष्ठा वाले दृष्ट होतीहै और कामादि उपद्रवसे रहितहै और ग्रहणत्यागसेभी रहितहै सदाही ब्रह्मचारीहै मोक्षसिद्धि इनको क्यों नहीं होती २५

अथवै ह्यात्मभाग्येषु नान्येषां सिद्धिमश्नुते तस्मात्कर्मैव कर्तव्यं नास्ति सिद्धिरकर्मणः २६

अथवा आप ऐसा करतेहो पशुवृक्षादि कर्मचेष्टा रहितहैं पूर्वसंचित कर्मकरके जडयोनि बनेहैं मैतो चेतनसत्तावालाहूं अपने त्यागरूप सर्वसंन्यास योगकरके मोक्षसिद्धिको प्राप्तहोताहूं उत्तरसुनो जो अपने पुरुषार्थकरके फलसिद्धि होतीहै तो अपना जातिधर्मका कर्मही कर्तव्यहै अकर्म पुरुषको मोक्षसिद्धि कदापि नहींहोती २६

औदकाः सृष्टयश्चैव जंतवः सिद्धिमाप्नुयुः येषामात्मैव भर्तव्यो नान्यः कश्च न विद्यते २७

जो तुमकरतेहो समस्त लोकोंको अपनीहै सो एकाकी पुरुषको वनजातीहै उत्तरसुनो जलवासी मीनमच्छी आदिक जीवभी अपनी शरीर पोषण करतेहैं सोभी मुक्त होजावें उनकोभी अपने शरीरसे और किसीका पालना नहीं कर्तव्यहै जैसे अपने शरीरयात्रावास्ते कर्मकर्तव्यहै तैसे लोकयात्रा वास्तेभी कर्मकर्तव्यहै २७

अवेक्षस्व यथा स्वैः स्वैः कर्मभिर्व्याप्टतं जगत् तस्मात्कर्मैव कर्तव्यं नास्ति सिद्धिरकर्मणः २८

यह तुम आपही विचारकरो जैसा यह जगतविषे जीवजाती है सो सभही अपने कर्मोंकरके सभही जगतविषे व्याप्तहै तो अपने जातिधर्मका कर्म अवश्य कर्तव्यहै अकर्म पुरुषको कछु सिद्धनहींहोता २८ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भीष्मवाक्ये दशमोध्यायः १०

अर्जुनउवाच अत्रैवोदाहरंतीम मितिहासं पुरातनं तापसैः सह संवादं शक्रस्य भरतर्षभ १

वैशंपायनउवाच राजायुधिष्ठिरसंन्यासको श्रेष्ठमानताहै भी

श्री॰ ग॰ य॰ टी॰ २९

२९

मसेन गृहस्थधर्मको श्रेष्ठमाननाहै इसविषे संन्यासपक्षको श्रे॰
ष्ठमानकर अधिकारहुवेके संन्यासकी अपेक्षाकरिके गृहस्थधर्म॰
हीश्रेष्ठहै ऐसी श्रुतिकी कथाको अर्जुन करताहै अर्जुनउवाच
हे राजन् इस प्रसंगविषे एक पुरातन इतिहासको उदाहरण कर
तेहैं तपस्वी जनोंके साथ इंद्रका संवाद भयाहै उसको आपश्रव
णकरो कोई एक ब्राह्मणके बालक जब द्विज संस्कारको प्राप्त
भई तबहे अपने गृहोंको त्यागकरिके वनको जातेभये कैसेहैं उन्ह
के मुखोंविषे दाढी मूछके रोमनही उगेहै मंदवैराग्यवालेहै उ
त्तम द्विजकुलमो जन्मेहै बहुउ गृहको नहीजाना इसप्रकारव
नको जातेभये १
केचिद्गृहान्परित्यज्य वनमभ्यागमन् द्विजाः अजा
तश्मश्रवो मंदाः कुलजाताः प्रवव्रजुः २
यह वनवासही हमाराधर्महै ऐसे जानकरिके ब्रह्मचारी होतेभये
भ्राता पितादिकोंको गृहमोही त्यागकर जातेभये उन्हको देखक
र यह बालकके अबही वनवासयोग्यनहीहै ऐसे जानकर इंद्र
उन्होंके प्रतिकृपा संयुक्त होताभया २
धर्मोयमिति मन्वानाः समृद्धाः ब्रह्मचारिणः त्यक्त्वा
भ्रातॄन्पितॄंश्चैव तानिंद्रोन्वकृपायत ३ तानाविवेश भ
गवान्पक्षी भूत्वा हिरण्मयः सुदुष्करं मनुष्यैश्च यत्कृ
तं विघसाशिभिः ४
इंद्रजी सो स्वर्णपक्षी होकर उन्हको वचन कहताभया मनुष्यो
का यासेजो अन्नभोजन सो जिन्होने त्याग कियाहै शुष्क तृणपत्रादि
भोजन करणा यह व्रत मनुष्योंको दुष्करहै यह व्रतधारण किया
है तोने विघसासी इन्द्रके नाम संज्ञा प्रसिद्धभईहै ४
पुण्यं भवति कर्मेदं प्रशस्तं चैव जीवितं सिद्धार्था
स्ते गतिं मुख्यां प्राप्ता धर्मपरायणाः ५
यह इन्द्रका व्रतकर्म पुण्यरूपहै इन्होका जीवना अतिप्रशस्तहै
यह इसप्रकारके व्रतकरिके सिद्धार्थभईहै सो सभही धर्मपरा
यण होकर मुख्य मुनि संज्ञावाली गतिको प्राप्तभयेहै इसप्र॰
कार इन्द्रने तपस्वीयोंको जो तापस ऋषि वचन करते भये ५

ऋषय ऊचुः अहो वनायं शकुनि विघसाशी प्रशंसति अस्मान् नूनमयं शास्ति नूनं वै विघसाशिनः ६
ऋषयऊचुः अहो आनंदभयाहै जो यह सुवर्णपक्षी विघसाशी व्रतकरणेहारी हमको प्रशंसाकरताहै इस आपही शुष्क तृण पत्रादि भोजन करताहै हम आपही विघसाशी नामप्रसिद्धकियाहै हमको ही यहपक्षी स्तुतिकरताहै ६
शकुनिरुवाच नाहं युष्मान् प्रशंसामि पंकदिग्धान् रजस्वलान् उच्छिष्ट भोजिनो मंदा नवैवो विघसाशिनः ७
शकुनिरुवाच सुवर्णपक्षि कहताभया है द्विजा मैं तुमको स्तुतिप्रशंसा नहीकरता तुम भावीकर्म दोषरूपी पंककर्के व्याप्तहो अतानकी रजोगुणकर्के युक्तहो वहउ तुम मृगकोटादि उच्छिष्ट शुष्क तृण पत्रको भोजनकर्के अपने आपको विघसासी नामधारी वनेहो ७
ऋषयऊचुः इदं श्रेयः परमिति वयमेवाभ्युपास्महे शकुनि ब्रूहि यच्छ्रेयो भृशं वै श्रद्दधामहे ८
ऋषयऊचुः हेपक्षिन् हमतो इसी व्रतको परमकल्याण जानकर उपासनकरतेहै जो हमारेको इसव्रतसे भिन्न अवर कल्याण रूपहै उसकोकहो हम तुम्हारे वचन श्रवण करणेको अति श्रद्धा करतेहै ८
शकुनिरुवाच इदं मा नाभिशंकध्वं विभज्यात्मानमात्मना ततोहं वः प्रवक्ष्यामि याथातथ्यं हितं वचः ९
शकुनिरुवाच हे द्विजा जोतुमने अपने २ आत्माको अपनी कल्पनाकर्के विषमभावकर्के नहीशंकाकरो इसप्रकारके विषमता आत्माविषे नहीकरो जो श्रवणकरणेवाला और आत्माहै वक्ता आत्मा औरहै शंका करणेहारा और आत्माहै ऐसा भेदकलना नहीकरो तोमै तुम्हारे हितपथ्यवचनको कहताहूं ९
ऋषयऊचुः शृणुमस्ते वचस्तात पंथानो विदिताः स्तव नियोगे चैव धर्मात्मन् स्थातुमिच्छाम शाधि नः १०
ऋषयऊचुः हे धर्मरूप हे तात तू हमारा हितकारीहै हमने

श्री॰ और मार्गनहीं जाने तेरे उपदेशमो स्थित होवनेको वांछाकरते
ग॰ प॰ है ते हमारेको उपदेशकरो १०
टी॰ शौनकिरुवाच चतुष्पदां गौः प्रवरा लोहानां कांचनं
३॰ वरं शब्दानां प्रवरो मंत्रो ब्राह्मणो द्विपदां वरः ११

शौनकिरुवाच हे द्विजाचार चरणोंवाले जीवोंविषे गौ श्रेष्ठहै और सब धातु गणविषे कांचनश्रेष्ठहै और शब्दसमूहोंविषे मंत्रश्रेष्ठहै और दोपादवाले मनुष्योंविषे ब्राह्मणश्रेष्ठहै ११

मंत्रैर्यज्जातकर्मादि ब्राह्मणस्य विधीयते जीवतो
पि यथाकालं श्मशान निधनादिभिः १२

मंत्रब्राह्मण कैसे श्रेष्ठ है सो कहते यह मंत्र ब्राह्मणको जातकर्मादि संस्कार विधानको जीविते करताहै जब इसका कालप्राप्तहोताहै तो श्मशान संस्कार और मृतक्रियाकोभी विधानको वेदमंत्र करताहै १२

कर्माणि वैदिकान्यस्य स्वर्ग्यः पंथाः क्रतूत्तमः क
थमे सर्वकर्माणि मंत्रसिद्धानि चक्रिरे १३

तांते ब्राह्मण शरीरको वैदिककर्महै स्वर्गका मारग सर्वयज्ञोंविषे श्रेष्ठहै द्विजसंस्कारकरके सर्वयज्ञोंका अधिकार होताहै जो वैदिक कर्म मार्ग ब्राह्मणको स्वर्गमार्ग नहीं होवे तो हमारे पितृपितामहादिक जोहैं सो मंत्रसिद्ध जातकर्मादि संस्कारको कौं करतेभये ऐसा आपही विचार करतेअहै १३

आत्मानं दृढवादीनि तथासिद्धि विदेह्यते मासार्थे
मासा स्तनच आदित्य शशिनारकं १४

यह पुरुष दृढनिश्चयवाला अपने आत्माको जैसे मार्गको प्राप्तकरे तैसी सिद्धिहोतीहै जिसदेवताका स्वरूपमाने सोई होतीहै जो अपनेको साक्षात् शिवरूप निश्चयकरे तो शिवरूप होताहै जो वासुदेवरूप माने तो वासुदेवरूप होताहै इसको आत्मस्वरूपकी प्राप्तिवास्ते तेनमार्ग वेदमो कहेहै उनका स्वरूपकहतेहैं मासादिमास शुक्लपक्षके अर्द्धमास और पितिरादि उत्तरायणकी तीनऋतु इस उपासनाकरके आदित्य लोककी प्राप्तिहोतीहै यहक्रमकरके मुक्तिस्थानको प्राप्त॰

करके द्वारा ब्रह्मलोक प्राप्तिवाला प्रथममार्ग है और तैसेही
श्रावणादि षट्मास कृष्णपक्षरूपी अंधमास वर्षादि तीनऋ
तु दक्षिणायन मार्ग है यह स्वर्ग प्राप्ति करता है भोगके अंत
कालमो पुनर्जन्म करके द्वारा केवल कर्ममार्ग है और इन्हो
से उत्तम सर्वो मुक्तिवाला तारकमार्ग है उसमो अध्यात्म अ
धिभौतिक ज्ञान विचार करके होता है उसविषे अविमुक्त क्षे
त्रकी उपासना होती है जिसविषे रुद्रजी तारक ब्रह्मतत्व
का उपदेश करते है तो एकजन्म करके मुक्ति होती है जिसको
पाइकर्के वहुरु जन्म नहीं होता १४.

**ईहंते सर्वभूतानि तदिदं कर्म संततं सिद्धिहेतु
मिदं पुण्य मध्य मेवा श्रमो महान् १५**

यह तीनमार्ग सर्व वेदमो तारक नाम वाले है सबही भूत
इनकी सिद्धिको चाहती है तीनो ही कर्ममार्ग ही कर्मफल
करके कहे है ताते कर्मके अधिकारका स्थान गृहस्थाश्रम क
हा है सिद्धिहेतु है सर्वप्रकारसे आश्रमो विषे श्रेष्ठ है और म
हाश्रम इसविषेही सर्व आश्रमोके उत्पत्ति है १५

**अथ ये कर्मनिंदातो मनुष्याः कापथंगताः मूढा
नामश्रद्दधानानां तेषामेनस्तु विद्यते १६**

अथशब्दकर्के अवर कहते है जो पुरुष कर्ममार्गको निंदाक
र्के सर्वत्यागरूपी खोटे मार्गको प्राप्तभये है सो मूढ है उन्हो
को कर्मफलरूपी अर्थसिद्धि नही होती केवल धर्मकर्म त्या
गका पापही होता है १६

**देववेषा पितृवेषा ब्रह्मवेषाश्च शाश्वतान् संत्य
ज्य मूढा वर्तंते ततो यांत्य धोपथम् १७**

जो पुरुष प्रथमही सर्वत्यागको उत्तम मानकर्के देवयानवा
ले कर्ममार्गको पितृयानवाले कर्म मार्गको ब्रह्म प्राप्त वाले
वेदोक्त तीन प्रकारके कर्ममार्गको त्यागकर्के जो मूढजन
केवल त्यागमार्गको प्रवृत्त होते है जिसका उत्तमफल श्रुती।
मोनही कहा ऐसी सर्प कीटादि पापयोनिको प्राप्त होते
है १७

एतद्धास्म तपोयुक्तं ददामी ऋषि वादिनम् ।

श्री. ग. प. टी. ३१

31

तस्मात्तत्त्वव्यवस्थानं तपसि तपउच्यते १८
हे द्विजो यह कर्ममार्ग तमको तपस्याके जो उपासना तिसक
कै संयुक्त सिद्ध होवे उपासना दो प्रकारकही है एक देवताके
निमित्त द्रव्यत्याग यज्ञादिकर्म करके कही है जिसकरके पुत्र
गो धन स्वर्गादि फल होताहै और एक तो अविमुक्त क्षेत्रकी उ
पासना है जिसविषे आत्मास्वरूपको कर्मोसे असंगयोगमा
र्गकरके जानना यह सभही वेदोक्त ऋषिमंत्रकरके कही है इ
न्हकी कर्तव्य व्यवस्था ही तपसी जनोंका तप कहा है केवल
देह शोषण तप नहीं है १८

देववंशा ब्रह्मवंशाः पितृवंशाश्च शाश्वताः सं
विभज्य गुरोश्चर्या तद्वै दुष्करमुच्यते १९
देवयानका देववंश मार्ग है ब्रह्मयानका ब्रह्मवंशमार्ग है
पितृयानका पितृवंशमार्ग है यह तीनो वेदोक्त कर्ममार्ग है
सनातन देवता ऋषिपरंपरा सेवते हैं इन्होंको गुरोकी सेवा
करके परस्पर विरोध कलना त्यागकरके दिनघटिकादि
कालविभाग करके व्यवस्थापूर्वक करणा सोई असाध्य
ता है इसको पंडित जनोने इहनिश्चय कर्तव्य यही तप
कहा है १९

देवा वै दुष्करं कृत्वा विभूतिं परमां गताः तस्मा
द्रहस्य मुहोऽपि दुष्करं प्रब्रवीमि वः २०
देवता ऋषिभि कर्मको इसमार्ग कठिन जानकरके विभाग
व्यवस्थापूर्वक करके परम सिद्धिको प्राप्त भये हैं ताते हे द्वि
जो रहस्य धर्मत्यागना महादुष्कर है इसविना इहलोक प
रलोक असाध्य है इसवास्ते तमको रहस्य करणेको उप
देश करता हूं २०

तपः श्रेष्ठं प्रजानां वै मूलमेतन्न संशयः कुटुं
ब विधिनानेन यस्मिन्सर्वं प्रतिष्ठितं २१
तप कहा है अपना कर्म है सो प्रजाके सबका मूल है सोई क
ल्याणरूप तप करके श्रेष्ठ है इसमें संदेह नहीं है कुटुंबी हो
करके रहस्यधर्म करके होता है जिसविषे सभही आश्रमोंका
धर्म वर्ता है २१

पतद्धिड स्तपोविप्रा द्वंद्वातीता विमत्सराः तस्मा
द्भुते मध्यमंत लोकेषु तप उच्यते २२
ताते ग्रहण त्यागादि द्वंद्व कलना रहित अनिंदक विद्यावान
ब्राह्मण ऋषी गृहाश्रम धर्मको तपोमय कहतेहै याहीते ब्रह्म
चर्य्यादि महाकष्ट संयुक्त वनवासादिकन सर्वत्यागकर्के म
ध्यम कहाहै और ब्रह्मचर्य्यादि रहित जो सर्वोपकारी गृहस्थ
धर्महै सोई सनातन तपकहाहै २२
द्रुताधेष पदेवैव गच्छेति विघसाशिनः सायंप्रात
विभज्यान्न स्वकुटुंबे यथाविधिः २३
हे द्विजा अपनेको विघसाशी मानतेहै विघसनाम अन्नकाहै
विना अन्नसे जो शुष्क तृणपत्रादिक उसको भोजन करतेहो
इस प्रकार विघसाशी ब्रत नहीं होता विघसाशी ब्रतवाले उ
गाधर्ष स्थानको प्राप्त होतेहै इस अर्थको तुम मोसे सुनो जो
पुरुष सायंकाल प्रातःकालविषे अपने कुटुंबको विभाग दे
कर्के शेषजो अन्न उसको दानपूर्वक भोजन करतेहै सोविघ
साशी कहेहै २३
दत्वा तिथिभ्यो देवेभ्यः पितृभ्यः स्वजनस्य च अव
शिष्टानि येश्नंति तानाहु विघसाशिनः २४
जो गरहस्थ धर्मवाले पुरुष प्रथम अन्नदान अतिथिजनोको दे
तेहै और देवता गणोको देतेहै और पितरोको विभाग देतेहै
अपने स्वजन कुटुंबकोभी विभाग करदेतेहै बाकीके अवशि
ष्ट अन्नको भोजनकरतेहै इस हेतुसे विघसाशी ब्रतवाले गृ
हस्थधर्मवालेही कहतेहै २४
तस्मात्स्वधर्म मास्थाय सुव्रताः सत्यवादिनः लो
कस्य गुरवोभूत्वा ते भवंत्य मुपस्कृताः २५
ताते जो पुरुष अपने वर्णधर्मवाले गृहस्थब्रतमो धारतेहै जो
सत्यवादी जनहै सो दानमानकर्के लोकगुरुहोकर निश्चयक
र्के संसारको तरजातेहैं २५
त्रिदिवे प्राप्य शक्रस्य स्वर्गलोके विमत्सराः

श्री॰
ग॰ प॰
टी॰
२२

वसंति धार्मसमान्वर्षान् जना दुष्करकारिणः २५
प्रथमतो अपने वर्णाश्रमको करके इहलोक स्वर्गलोक सबको पाकर्के सर्वप्रकारके विनयरहित अनेकवर्षपर्यंत अवश्य वास करते हैं जौन से आश्रमांतर कर्के दुष्कर गृहस्थधर्मको करते हैं सो समारसमुद्रको तरजाते हैं २५

अर्जुन उवाच ततस्ते तद्वचः श्रुत्वा धर्मार्थसहितं हितं कुरुश्रेष्ठ नास्तीतिगता गार्हस्थ्यं समुपाश्रिताः २७
अर्जुन उवाच हे राजन् इस प्रकार सो द्विजपुत्र पक्षिरूपी इंद्रकी धर्मार्थसहित ऐसे वचनको सुनकर प्रथम सन्यासकी वांछा करते भये वह दूर करते भये सन्यास अच्छा नहीं इस प्रकार सन्यासकी वांछाको त्यागकरके गृहस्थधर्मकी वांछा कर्के अपने गृहोंको जाते भये २७

तस्मात्त्वमपि धर्मज्ञ धैर्यमालंब्य शाश्वतं प्रशाधि पृथिवीं कृत्स्नां हतामित्रां नराधिप २८
हे राजन् ताते तुमभी धर्मज्ञ होकरके अपने गृहस्थ धर्मविषे धैर्यधारणकर्के यह पृथिवी शत्रुमारण करके तुम्हारी भयी है इसको अपने राजधर्म कर्के पालन करो २८

इति श्री महाभारते राजधर्मेषु धर्मार्थप्रकाशो एकादशोध्यायः ११
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे अर्जुनवाक्यं धर्मार्थप्रकाशो नाम एकादशोध्यायः ११

वैशंपायन उवाच अर्जुनस्य वचः श्रुत्वा नकुलो वाक्यमब्रवीत् राजानमभिसंप्रेक्ष्य सर्वधर्मभृतांवरं १
वैशंपायन उवाच इस प्रकार अर्जुनने वाक्य कर्के कर्मोंकी श्रेष्ठता कथन किई भई सो भी अभिमान त्यागसंयुक्त फलाशा त्यागपूर्वक कथन किई है इस प्रकार के नकुलके वचनोंको कहते हैं हे जनमेजय अर्जुनके वचनको श्रवणकर्के सर्वधर्मधारी जनोंविषे श्रेष्ठ नकुल है सो राजाके मुखको देखकर वचनको कहता भया १

अनुरुध्य महाप्राज्ञो भ्रातृचित्तमरिंदमः व्यूढोरस्को महाबाहुस्ताम्रास्यो मितभाषिता २
कैसा है नकुल महाबुद्धि है शत्रुगणको जीतने हारा है दृढहृदयवा

लाहै विशाल पराक्रम संयुक्त जिसकी भुजा है राजाको मार्गबुद्धि
करके रुक्मवर्ण सुखवालाहै राजाको चित्तवृत्तिको रोककरके वच
नको कहताभया २

नकुलउवाच विशाखयूपे देवानां सर्वेषां सत्रयाज्ञि
नाः तस्माद्धि हि महाराज देवाःकर्मफलेस्थिताः ३

नकुलउवाच हे राजन् विशाखयूप नामकरके प्रसिद्ध तीर्थविषे संपू
र्ण देवतागणोंने यज्ञवास्ते स्थंडिलविषे इष्टिका छिन्नकरके वेदी कल्प
नाकोनीही उसविषे अग्निस्थापन कियाहै सो अग्निस्थापनकी वेदकी
इष्टिका अबभी दृष्टहोतीहै ताते देवताभी कर्मफलकी वांछाकरतेहै स
काम कर्मकरके पितृलोक प्राप्तहोताहै निष्काम कर्मकरके देवलोक प्रा
प्तहोताहै ऐसे श्रुतिप्रमाणसे जो निष्काम कर्मकरके ब्रह्मलोकमो गयेहै
सो इहां देवता कहेहै ३

अनास्तिकानां भूतानां प्राणदाः पितरस्तथे तेपिक·
र्मैव कुर्वंति विधिं मेप्रेक्ष पार्थिव ४

हे राजन् जौनसी प्राणी धर्मकर्म करणेमो नास्तिक नहीहै तिन्होको
जो अन्न समर्पित होताहै सो पितरदेवता कहेहै ताते पितरभी फल।
दानरूपी कर्मके कर्ताहै तांते तमभी कर्मकांड विधीकोही शुभ
जानो ४

वेदवादापविद्धांस्तु तान्विद्धि भृशनास्तिकान् नहि
वेदोक्तमलस्य विप्रः सर्वेष्व कर्मसु ५

जौनसे पुरुष कर्मकांड वेदवाक्योंको अपवाद करतेहै निषेध करते
है तिन्हको तुम नास्तिकजानो वेदोक्त विधिको मार्गकरके कोई ब्रा
ह्मण हमने कर्मफलभोक्ता नहीदेखा तांते अग्निहोत्रादि विप्रधर्म
सभहि कर्म साधेहै ५

देवयानेन नाकस्य पृष्ठ माप्नोति भारत अन्याश्रमा
नयेसर्वा निराहू वेदनिश्चयाः ६

हे भरतश्रेष्ठ निष्काम कर्मकरके देवयानगति होतीहै उसीकरके
कर्मकांड नाकपृष्ठको ब्रह्मलोकको प्राप्तहोताहै यह गृहस्थाश्र
म सकल आश्रमोको अपनी कर्मनिष्ठाकरके जीतलेताहै सभसीयही
अतिश्रेष्ठहै यह सकलवेदोका निश्चयहै ६

ब्राह्मणाः श्रुति संपन्ना स्तान्निबोध जनाधिप·

श्री॰
ग॰ य॰
टी॰
३३

विनाशि धर्मलब्धानि कृतसुखेषु वासवन् ७
हे जनाधिप वेदोक्त विधि संपन्न सोई ब्राह्मण जानतु जौनसे अपने
धर्म कर्म की प्राप्तवाले धर्मसंग्रहको यज्ञकर्मकरके ब्राह्मणोंके
मुखविषे अर्पनकरतेहैं ७

कृतात्मा स महाराज सर्वत्यागी स्मृतोगरः अनेव
हा मुखोदाने तथैवार्धे प्रतिष्ठितः ८
जो पुरुष अपने वर्णके धर्म कर्मको और चित्तको अहंता मम
ता त्यागवालेको करताहै सो पंडित जनोने सात्विक त्यागी
कहाहै ८

आत्मत्यागी महाराज सत्यागी तामसः प्रभो अ
निकेतः परिपतन् वृक्षमूला श्रयोमुनिः ९
जो पुरुष अपनी मूढताकर्के सर्वसाध्य गृहस्थधर्मको त्याग
करताहै उर्ध्वगतीकी निष्ठाको करताहै हे महाराज सो आत्मत्या
गीहै आत्मघातीहै उसको तामस त्यागी कहतेहै इसका प्रमाण
मनुमहाराजने कहाहै जौनसा द्विज वेदनहीपढे और गृहस्थध
र्मकी वृद्धिवास्ते संतान उत्पन्न नहीकरे केवल त्यागकरके मोक्ष
की वांछाकरे तो अधोगतिको प्राप्तहोताहै तांते तामस त्या
गनही करणा ९

अपाचकः सदायोगी सत्यागी पार्थभिक्षुकः क्रो
धरक्षी वनाटस्य पैशुनेव विशेषतः १०
जिस पुरुषने गृहस्थधर्मको त्यागकियाहै और भिक्षावास्ते पृथिवी
को अटनकरता यद्यपि उसने सर्व इंद्रियोंकी वृत्ति योगकर्के जीति
है तोभी भिक्षायाचन कर्के ब्राह्मणजैसा भिक्षुकहै उसका यह
धर्म शुभहै तोभी जिसक्षत्रीसे प्रजापालनका क्लेशनहीवने उसका
त्याग राजसहै ताते दोषमूलकहै यह त्याग क्षत्रिय वर्णको शुभन
हीहै इसकाप्रमाण श्रुतीहै जब क्षत्रियसे प्रजापालन नहीवने
तो प्रजारक्षाके अभावसे ब्राह्मणजैसा भिक्षुक्षत्रिय होताहै उसको
याचनाकरणी महादोषहै १०

विप्रोवेदा नधीतेयः सत्यागी पार्थभिक्षुकः आश्र
मो लक्षया सर्वा न्यूनतानामभनीषिणः ११
हे राजन् जोपुरुष क्रोधलोभको त्यागकर्के परनिंदाकोभी

त्यागकर्के यो ब्राह्मण वेदको अध्ययन करताहै सो भिक्षुभी त्या
गीकहाहै इसका अधिकारभी ब्राह्मण कोहीहै यहभी राजस
त्यागहै ११
एकतश्च त्रयोराजन् गृहस्थाश्रम एकतः समी
क्ष्य तुलया पार्थ कामं स्वर्गंच भारत १२
धर्मवेत्ता आचार्य जोहै सो आश्रमोको तीनवेदोकेसाथ
तुलना करतेभये एक ओर तीनवेद तीनो आश्रमयहै एक
तरफ गृहस्थ धर्म भयाहै १२
अयंपन्था महर्षीणा मियं लोकविदां गतिः
इतियः कुरुते भावं सत्यागी भरतर्षभ १३
तुलनाकर्के विचारकिया तो इसविषे स्वर्गभोगको काम
भोगकोभी धर्मरूप देखायाते गृहस्थ धर्म अधिकहै यह
गृहस्थधर्म महाऋषीयोको मोक्षमार्गवनाहै स्वर्गादि उत्त
म लोकोकी गतीहै १३
नयः परित्यज्य गृहा न्वनमेति विमूढवत् यदा
कामा न्समीहेत धर्मवेत्त सिकोनरः १४
जो पुरुष इस गृहस्थधर्मको अवश्य कर्तव्य मानताहै फ
लवांछाके प्रसंगसे रहित होताहै सोई संन्यासी कहाहै जो
नसा अभिमानकर्के गृहत्यागकर्के वनको जाताहै सो अति
मूढहै उसको त्यागीनही मानना १४
अथैनं मृत्युपाशेन कंठेवध्नाति मृत्युराट् अभि
मान कृतं कर्म नैतत्फल वदुच्यते १५
पाखंडकर्के त्यागी पुरुष जोहै सो मूढत्यागीहै जब कामभो
गकी वांछाको करताहै उसीकालविषे उसको मृत्युपाशकर्के
यमराज बांधलेताहै अनेक क्षुद्रयोनीको प्राप्तकरताहै १५
त्याग एके महाराज सर्वमेव महाफलं शमोद
मस्तथा धैर्यं सत्य शौचं मथार्जवम् १६
ऋषिजनोंकी यहीविधिहै शमदमधैर्य और सत्य शौच आ
र्जव और यज्ञधृति धैर्य्य यह सभ अभिमानरहित फलप्रेम
गरहित करणा अभिमानसे कियाजो सदा अखंड फल
को करताहै १६

श्री ग. य. टी. ३५

34

यतो हृतिस्य धर्मस्य नियमार्थो विधिः स्मृतः पितृदेवातिथिकृते समारंभोत्र शस्यते अत्रैव हि महाराज त्रिवर्गः केवलं फलं १७

हे महाराज पितरोके देवतागणोके अतिथिजनके उपकार वास्ते गृहस्थविषे धर्म कर्मका आरंभ श्रेष्ठ कहाहै इसको धर्म अर्थ कामकी प्राप्तिका फल गृहस्थधर्म विषेही होताहै १७

धनस्य वर्तमानस्य विधावप्रति षेधिते त्यागिनः प्रसक्तस्येह नोच्छित्ति विद्यते क्वचित् १८

यह गृहस्थधर्म निषेधरहितहै इसके विधानविषे प्रवृत्तभया है और फलवांछाको त्यागकरताहै धर्मकर्मको अभिमान त्यागकरकै करताहै उसको धर्महानि कदापि नहीहोती १८

असृजद्धै प्रजाराज प्रजापति रकल्मषः मां यक्षतीति धर्मात्मा यज्ञैर्विविधदक्षिणैः वीरुधश्चैव वृक्षाश्च यज्ञार्थं वै तथौषधी २०

आदि सृष्टिकर्ता प्रजापतीजोहै सो तृणोका वृक्षोको यज्ञ वास्ते सृजताभया तैसेही औषधी और पशुगण और पवित्र जैसे अन्नको तृणोको यज्ञवास्ते सृजताभया २०

पशवश्चैव तथा मेध्यान् यज्ञार्थानि हवींषिच २१

यज्ञकरणेवास्ते प्रजाको सृजताभया प्रजालोक नानाप्रकार की दक्षिणावाले यज्ञोकरकै मोको यजनकरेंगे २१

गृहस्थाश्रमिणस्तस्य यज्ञकर्म विरोधकं तस्माद्गृहस्थ मेवेह दुष्करं दुर्लभं तथा २२

हे राजन् गृहस्थाश्रमीको यज्ञकर्म विरोधनहीकरता तांते गृहस्थाश्रमही परम दुष्करहै इतर आश्रमोको दुर्लभहै २२

तान्संप्राप्य गृहस्थायें पशुधान्य धनान्विताः नयजन्ते महाराज शाश्वतं तेषु किल्बिषं २३

जो पुरुष गृहस्थधर्मको पाइकर धनधान्य पशुसंपदायुक्तहै तोभी यज्ञनहीकरते उन्होको अखंड नरकवासकारी पापसदाही बनाहै २३

स्वाध्याय यज्ञा ऋषयो ज्ञानयज्ञा स्तथापरे अथा
परे महायज्ञान् मनसैव वितन्वते २४
केते ऋषि स्वाध्याय यज्ञवालेहैं केते मुनि ज्ञानयज्ञवालेहैं और के
ते पंचमहायज्ञवालेहैं यह सभही ममतात्यागकर्के अवश्य कर्त
व्य मनमों जानकर करतेहैं २४
एवं मनः समाधान मार्गमा तिष्ठतो नृप हिंसा
ते ब्रह्मभूतस्य स्पृहयंति दिवौकसः २५
हे राजन् इसप्रकार सावधान कर्के जो हिंसानिकर्म मारग को
करताहै सो वेदोक्तकर्म मार्गकर्के ब्रह्मरूपहोताहै उससे देवता
यज्ञभागकी वांछाकरतेहैं २५
सत्त्वानि विचित्राणि संजनानि ततस्ततः सवे
षूनभि संपश्य नास्तिका मभि जल्पसि २६
प्रथम स्वाध्याय यज्ञहै सो ब्रह्मचर्यमो होताहै द्वितीय द्रव्ययज्ञ
है सो गृहस्थको होताहै तृतीय ज्ञानयज्ञहै सो संन्यासकर्के हो
ताहै तेरेको ब्रह्मचर्यका कालवीतगयाहै अब द्रव्ययज्ञकर्तव्य
है सो तू मध्यम जो द्रव्ययज्ञ उसके साधनहै नानाप्रकारके धन
रत्नादिक सो तेरेको सभही प्राप्तहै यह यज्ञ सर्वभूतोंका उपका
री इसको त्यागकरके केवल ज्ञानयज्ञ मानताहै ताते नास्ति
क मतको मानताहै २६
ऊर्द्ध्वं मा क्षियतेत्यागं न पश्यामि नराधिप राज
सूयाश्वमेधेषु सर्वमेधेषु वा पुनः २७
सो अब ऊर्द्ध्व धर्मवालाहै जो को वेदवेदोक्त मार्गका संन्या
सनही बनता जोको राजसूय यज्ञविषे अश्वमेध यज्ञविषे सर्व
मेधादि यज्ञोंका अधिकारहै २७
येचाप्यु ऋतवः तात ब्राह्मणो ऽपि हजिताः तैर्यज
स्व महीपाल शक्रो देवपति र्यथा २८
औरभी जोजो ब्राह्मणोने वेदमार्गके अतिश्रेष्ठयज्ञकर्म करेहैं
तिन्होको विधिकर्के तूंभी यज्ञ कर जैसे इंद्रदेवता पतिहोकर
के यज्ञकरताहै २८
राज्ञः प्रमाद दोषेण दस्युभिः परिमुष्यतां अशरण्या
प्रजानां हि स राजा कलि रुच्यते २९

राजा सर्वप्रजाकी रक्षामो सावधान नही होवे तो प्रजाकी चोरादिक लूटलेते है जो राजा प्रजाकी रक्षावास्ते शरण्ययोग्य नही होवे सो राजा कलियुग रूप होता है सर्वप्रकारके पापका मूल होता है १९

अश्वांश्च गाश्च दासीश्च करेणश्च स्वलंकृताः ग्रामा
जनपदाश्चैव क्षेत्राणि च गृहाणि च २०

जो तू राज्यत्यागरूपी प्रमादकरे तो आपही कलिरूप होवेगा जो राजा अश्वदान गोदान दासीदान गजगजी दानोको सर्वालंकार संयुक्त नहीकरे और ग्राम नगर खेतगृहादि दान नही करेगा २०

अप्रदाय द्विजातिभ्यो मात्सर्याविष्टचेतसः वयं ते
राजकलयो भविष्याम विशांपते २१

वेदद्रोहके दोषकर्के राज्यत्याग करेगा तो हमतेरी भ्राताभी प्रजापालन विना कलिरूपही होवेगें २१

अदातारो शरण्याश्च राजकिल्बिषभागिनः दोषा
णामेव भोक्तारो न सुखानां कदाचन २२

दानभी हमनही करेंगे प्रजाकी रक्षानही करेंगे राजधर्मका त्यागरूपी दोषकर्ता होवेंगे तातें दुःखफलभोक्ता बनेगी सुखभोगी कदापि नही होवेगे २२

अनिष्ट्वा च महायज्ञैरकृत्वा च पितृस्वधां तीर्थेष्व
नभिसंस्नात प्रव्रजिष्यसि चेत्प्रभो २३

हे राजन् जो तू महायज्ञोको नहीकरेगा और पितरोके निमित्त स्वधायज्ञ नहीकरेगा और तीर्थविषे स्नानकर्के दाननही करेगा गृहस्थ होकर त्यागकर्के वनको जावेगा २३

छिन्नाभ्रमिव गन्तासि विलयं मारुतेरितं लोक
यो रुभयो भ्रष्टो ह्यन्तराले व्यवस्थितः २४

तो जैसे पवनवेगकर्के मेघमंडल आकाशमोही लयहोता है तैसे उभय लोकसे भ्रष्ट होकर नरकमो पिशाच योनीको जावेगा २४

अन्तर्बहिश्च यत्किंचिन्मनोव्यासंगकारकं परि
त्यज्य भवेत्त्यागी न हित्वा प्रतितिष्ठति २५

जो गृहस्थ होकर त्यागकिया चाहो तो शास्त्रज्ञानमो दानकर्म।

मो यज्ञयागादिकरणेमो अहादि राजधर्मविषे पुत्र पशु आदिकोकी
समृद्धिमो अहंज्ञाता अहंदाता अहंकर्ता अहंहंता अहंसर्वाधिपति
इसप्रकारकी अहंता ममताका अंतर्बाह्यतसे त्यागदेवै तो सर्वत्या
गकी प्रतिष्ठाको पावताहै २५
एतस्मिन्वर्तमानस्य विधाव प्रतिषेधने ब्राह्मण
स्य महाराज नोछित्ति विद्यते क्वचित् २६
हे महाराज इसप्रकारकी निषेधरहित गृहस्थधर्मका वेदोक्त रा
जधर्मविधिमो जो प्रवृत्त होताहै सो ब्रह्मज्ञानकी ब्राह्मण निष्ठा
वालाहै उसको वर्णाश्रम धर्मकी हानि कदापिनहीहोती २६
निहत्य शत्रूंस्तरसा समृद्धान् शक्रो यथा दैत्यब
लानि संख्ये कः पार्थ शोचन्निरतः स्वधर्मे पूर्वैः
स्थितः पार्थिव शिष्टजुष्टे २७
हे कौंतेय जैसे इंद्र अतिबलवाले दैत्यसेनाके महाशूरमा
जनोंके मारदेताहै तैसे महापराक्रमी शत्रुशूरमा जनोंको रणवि
षे मारकरकै पूर्वले राजऋषिगणोंकरकै सेवित राजधर्म वि
षे स्थितभयाजो राजाहै सो तेरे बिना और कौन शोचकर
ताहै २७
क्षात्रेण धर्मेण पराक्रमेण जित्वा महीं मंत्रविद्भ्यः
प्रदाय नाकस्य पृष्ठस्य तेऽसि गंता न शोचितव्यं
भवताद्यपार्थ २८
हे पार्थ अपनी क्षत्रीधर्मकरकै पराक्रमकरकै पृथिवीको जी
तकरकै और वेदमंत्रोंके विधिवेत्ता ब्राह्मणोंको यज्ञादिकोंवि
षे दक्षिणादानकरके तू स्वर्गको अवश्यही जावेगा इसकाल।
विषे तेने शोचना योग्यनहीहै २८ इतिश्री महाभारते शांति
पर्वणि राजधर्मे नकुलवाक्ये द्वादशोध्यायः १२
सहदेव उवाच न बाह्यं द्रव्यमुत्सृज्य सिद्धिर्भवति
भारत शारीरं द्रव्यमुत्सृज्य सिद्धिर्भवति वा न वा १
सहदेवउवाच हे भरतवंशके राजन् व्यवहारिक जो द्रव्यहै उ
सको त्यागकरके कोई सिद्धिनहीहोती शरीरसंबंधी द्रव्य।
त्यागकरकै त्यागफलकी सिद्धि होती है अथवा नहीहोती उस
मो अधिकारकोभेदकी व्यवस्था जानव्यहै इसको त्याग विषे

श्री· रा· प· टी· ३९

अहंता ममताका त्यागकरना जो अहंता त्याग करके तो शरीर यात्राका निर्वाहन हीहोना वर्णाश्रम धर्मको व्यवहार नष्ट होजा। तोहे ताते सर्वकालविषे ममता त्यागही कर्तव्य हे १

बाह्यद्रव्य विमुक्तस्य शारीरेषु रतात्मनः योधर्मो यस्त्वथ वास्यात् द्विषतां न तथात्मनः २

ममता ममताका संबंधी द्रव्यभी दोप्रकारका हे एक व्यवहारिक हे और शारीर हे सो मनकल्पित हे व्यावहारिक हे ममता द्र। व्यका त्याग मनसे अवश्यकर्तव्य हे जो पुरुष व्यावहारिक वाह्यद्रव्यको त्यागकरके मुक्त भयाचाहे मनोमय ममता कल्पित द्रव्य आसक्तिवाला हे उसका जो त्यागधर्म हे जो उसके फलको भावहे मनसंताप तथा लक्ष्मादि दुखचिंता संयुक्त सो तुमारे शत्रुगणको होवे २

शारीर द्रव्य मुक्तस्य पृथिवीं मनुशासतः योधर्मो यस्त्वथ वास्यात् सुहृदां न तथात्मनः ३

और मनके ममता कल्पित शोकमोहादि शरीरद्रव्यको त्याग करके असंगतासे राजधर्म करके पृथिवीको पालनेहारे राजाको शोकमोहादि संतापरहित जो अखंडानंद सुख होता हे प्रजापालनरूपी धर्मफल होताहे सो तुमारे सुखसंबंधी हमलोकोंको होवे ज्ञानी पुरुषका पुण्यफल उसके प्रेमवालेको कहाहे पापफल द्वेष निंदाकारीको होताहे ३

द्व्यक्षरस्तु भवेन्मृत्यु नममेति च शाश्वतं ममेति च भवेन्मृत्यु त्र्यक्षरं ब्रह्म शाश्वतम् ४

हे राजन् अक्षरोंके कलनामो मृत्यु कहाहे तीनो अक्षरोंकी कलनाविषे अखंड ब्रह्मता वनीहे इदंमम इदंमम ऐसी ममताविषे मृत्यु वनाहे इदं नमम इदं नमम ऐसी ममता त्यागविषे· अखंड ब्रह्मप्राप्ति वनी हे ४

ब्रह्ममृत्यू ततो राजन्नात्मन्येव समाश्रितौ अदृश्यमानौ भूतानि योधयेतामसंशयं ५

ताते हेराजन् ब्रह्मभाव और ममताभाव इसप्रकार अदृश्यमानही सर्वभूतोविषे युद्धकरावताहे ५

अविनोशोस्य सत्वस्य नियतो यदि भारत हत्वाश
रीरे भूतानां न हिंसा प्रतिपत्स्यते ६
जिसने अहंता ममतादि आवेशविना युद्ध कियाहै उसको
दोष प्रसंगका अभाव कहतेहै हे भारत जो इसजीवात्माको
अविनाशी निश्चय कियाहै तो सर्व भूतोंके शरीरको मारक
कें हिंसा दोषन ही प्राप्त होता आत्मासदा नित्यहै ६
अथापि च सहोत्पत्तिः सत्वस्य प्रलयस्तथा नष्टे
शरीरे नष्टस्यात् वृथावस्था क्रियापथः ७
जो हिंसाकरणे हारा देहाभिमानहै सो अनित्यहै देहकेसाथ उ
त्पन्नहोताहै और देहकेसाथै लयहोताहै तो कर्ताहंतादि कल्पना
मार्गव्यथाहै इसप्राणीको जीवना मरणा अवश्यवनाहै तातेभी
हिंसादोष नहीहै ७
तस्मादेकांत मुत्सृज्य सर्वैः सर्व तरस्त्रयः पंथानि
षेवितः सद्भिः सन्निषेव्यो विजानतः ८
तांते कर्ताको नित्यता अनित्यताके निश्चयकों जो नसा सर्वले
से सर्वले आचार्य लोकोंने सेवितमार्ग विचारवान पुरुषने अ
वश्यसेवने योग्यहै ८
लब्ध्वापि पृथिवीं कृत्स्नां सह स्थावर जंगमां नभुं
क्यो न्नृपःसेप निष्फलं तस्य जीवितं ९
जो राजा अपने पराक्रमकरकें स्थावर जंगम द्रव्यसहित संपूर्ण
पृथिवीकों प्राप्त होकर अपनी मूढताकरकें राजधर्मके मर्यादासे
नहीभोगे उसका जीवना निष्फलहै ९
अथवा वसतो राजन्वने वन्येन जीवितः द्रव्येषु
यस्य ममता मृत्योरास्ये सवर्तते १०
अथवा वासद्रव्यको त्यागकरकें वनवासकरकें वनविषे वनके
फलमूलकरकें जीविताहै द्रव्योविषे ममतावनीहै सो मृत्यु
को मुखमो वर्तमानहै १०
बाह्यांतरश्च व भूतानां स्वभावं पश्यभारत येतप
श्यति न द्रूत मुच्यते सर्वतो भयात् ११
आप विचारकरके सर्वभूतोंकेबाह्य अभ्यंतर द्रव्यके स्वभाव

श्री० रा० प० टी० ३७

वोदेषो यह सभही आत्मसत्ताविषे आत्मसत्ताकरके आभास मात्र है मृगतृष्णा समान वास्तवन ही है ऐसी जो विवेकी जान कर व्यवहारकरते हैं सो बाह्यअभ्यंतर इत्यप्रसंगवाले संसार भयसे मुक्त होते हैं ११

भवान्पिता भवान्माता भवान्भ्राता भवान्गुरुः
दुःखप्रलापा नार्तस्य तन्मे त्वं क्षन्तुमर्हसि १२

हे राजन् तुमही हमारे पिता तुमही माताहो तुमही भ्राता हो तुमही गुरुहो मे अपनी दुःख प्रलापसे कहताहुं आपक्षमाकरणे योग्यहो १२

तथ्यं वा यदि वा तथ्यं यन्मयैतत्प्रभाषितं तद्धि
द्धि पृथिवीपाल भक्त्या भरत सत्तम १३

यह मेरावचन सत्य है अथवा मिथ्या है जो मैने कहा मे अपनी चतुरतासे नहीकहा आपकीभक्ति करके कहा मे १३

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे सहदेववाक्यं त्रयोदशोध्यायः १३

वैशंपायनउवाच अव्याहरति कौंतेये धर्मराजे
युधिष्ठिरे भ्रातृणां ब्रुवतां तांस्तान्विविधान्वेद
निश्चयान् १

वैशंपायनउवाच हेराजन् जनमेजय राजा युधिष्ठिरके भ्राता भीम अर्जुन नकुल सहदेव इसप्रकार नानाप्रकारके वेदसंयम राजधर्मके अपने २ कार्य अपने निश्चयोको कहतेभये धर्मराज युधिष्ठिर उत्तरभी नही कहताभया १

महाभिजनसंपन्ना श्रीमत्यायतलोचना अभ्य
भाषत राजेन्द्रं द्रौपदी योषितांवरा २

इसीकालमो द्रौपदी राजाको देषतीभई कैसी है अपने कुल के अभिमान संपन्न है राजधर्मकी संपदावाली है सर्वप्रकारकी विचारसंपन्न विशालनिस्के नेत्र है संपूर्ण स्त्रीउणोंकर्के श्रेष्ठ है सो राजाको वचनकहती है २

आसीनमृषभं राज्ञां भ्रातृभिः परिवारितं सिंह
शार्दूलसदृशैर्वीरैर्गजैरिव यूथपं ३

कैसाहै राजा सकल राजा लोकोविषे श्रेष्टहै सिंह शार्दूल समान
अपने भ्राताजोहै तिन्होकरके संयुक्तहै जैसे मदमत्त गजा करके
महागज शोभताहै ३
अभिमानवतीनित्यं विशेषेण युधिष्ठिरे लालिता
सततं राज्ञा धर्मज्ञा धर्मदर्शिने ४
सभपांडवोविषे उसको अतिप्रेमका अभिमानहै और युधिष्ठिर
विषे सभसे अधिक विशेष अभिमानहै राजानेभी प्रेमवचनवाले
आज्ञाकर्के बहुतमानीहै आपधर्मज्ञहै सभको राजधर्मका उप
देशाकरणेहारीहै ४
आमंत्र्य विपुल श्रोणी साग्रा परम वल्गुना भर्तार
मभिसंप्रेक्ष्य ततो वचन मब्रवीत् ५
अतिधीर परम मधुर वचनकर्के राजाको बुलायकर्के विस्तार
वाले नितंबस्थानकर्के धीरहोकर राजाकेपास बैठकर्के सन्मुख
देषकर्के वचन कहतीभई ५
द्रौपद्युवाच इमेते भ्रातरः पार्थ उप्यंते स्तोकका इव
वाचाच्यमाना तिष्ठंति नचैनान भिनंदसे ६
द्रौपद्युवाच हेराजन् यहतेरेभ्राता वालीकोकीन्याई दीनतासे बो
लतेहै तेरी आज्ञाविषे सावधानस्थितहै इसको तूं प्रसन्नवचन
को उत्तरकर्के क्यौं नही संभावना करता ६
नदेयं नान्महाराज मत्तानिव महाद्विपान् उपपन्ने
न वाक्येन सततं दुःखभागिनः ७
हे महाराज यहतेरी भ्राता मदमत्त गजोंकी सर्वकार्योंके भा
रको धारणकरणे हारेहै इन्हको युक्तिन्यायसंयुक्त उत्तरवचन
कर्के आनंदसंयुक्तकर यहतेरी आज्ञाकर्के सदाही दुषभा
गी भयेहै ७
कथं द्वैतवने राजन् सर्वमुक्ता तथाविधः भ्रातृने
तान् सहितान् शीतवातातपार्दितान् ८
जो तेने सदा सर्वसाग करणाही शुभजानाहै सो वनवास का
लविषे द्वैतवनमो एवं ऐसा वचन कैसे कहाहै उसकालविषे
भी तेने शीतवातादि क्लेश संयुक्तही देषेहै तो इन्हको वच
न कहाहै ९
वधे दुर्योधने हत्वा मृधे भोक्ष्याम मेदिनी

श्री. रा. प. टी. २८

संख्येणा सर्वकामाना माहवे विजयैषिणः ९
हमवनवास उपरंत प्रतिज्ञाके रणमंडलमो दुर्योधनको मा
रकर्के सर्वकाम संयुक्त पृथिवीको भोगेंगे युद्धमो विजयकी
वांछावाले ९

विरथांश्च रथान्कृत्वा निहत्य महागजान् सं
स्तीर्य रथैर्भूमिं समादिमि रविंदमाः १०
रथोको रथी रहितकर्के महागजोको मारकर्के रथोकर्के पै
दलोकर्के पृथिवीको छादित करेंगे १०

यजता विविधैर्यज्ञैः समृद्धै राम दक्षिणैः वन
वासकृतं दुःखं भविष्यति मखावयः ११
जो सर्वपृथिवीका राज्यकरेंगे उसकालविषे दुर्योधनके प्रति
समृद्धवाले घणीदक्षिणा संयुक्त यज्ञोकर्के यजन करणा इ
सकालविषे दुर्योधनके यज्ञनिमंत्रणसे मनमो संताप नही
करणा यहवनवास कृत दुःख तमको बहुत सुखकारी
होवेगा ११

इत्येतानेव मुक्ताहं स्वधर्म भृतोवरः कथम
द्य पुनर्वीर विनिहसि मनोस्विनः १२
आप तम धर्मधुरंधरोविषे श्रेष्ठ होकर ऐसे वचन कहिकर्के
अब फेर सर्वत्यागकरके हमारे सभके मनका वीरमानी होकर
कायरतासे आसाभंगकरके मारताहै १२

नक्लीवो वसुधां भुंक्ते नक्लीवो धन मश्नुते नक्ली
वस्य गृहेपुत्राः मत्स्याः पंक इवासते १३
यो रणकार्यविषे कायरहोवे सो पृथिवीको कदापिनही भोग
ता ऐसे कायरको धनलाभ नही होता जैसे कीचमो मत्स्यनही र
हते जैसे कायर गृहमो पुत्रभी नहीहोते १३

नादंडः क्षत्रियो भाति नादंडो भूमि मश्नुते नादंड
स्य प्रजा राज्ञः सुखं विंदति भारत १४
दंडकार्य विना क्षत्रीको शोभा प्रतिष्ठा नही होते दंडविना पृ
थिवीको राजा नही भोगसकता दंडरहित राजाकी प्रजा भी
सुखनहीहोती १४

मित्रता सर्व भूतेषु दानमध्ययनं तपः

ब्राह्मणस्यैव धर्मस्या नराज्ञो राजसत्तम १५
हे राजन् सर्वभूतोंविषे दया और यथाशक्तिदान और वेदशास्त्रो
अध्ययन और वनवासादि तप यह धर्म त्यागी ब्राह्मणका धर्म है
हे राजसत्तम यह राजाका धर्मनही है १५
असतां प्रतिषेधश्च सतांच परिपालनं एषराज्ञां
परोधर्मः समरे चापलायनम् १६
दुष्टोंको दंडकरणा संतोकी पालना करणी यह राजोंका परम।
धर्महै और रणसे पलायन नही करणा १६
यस्मिन् क्षमाच क्रोधश्च दानादाने भयाभये निग्र
हानिग्रहौ चोभौ सर्वधर्म विद्यते १७
जिस राजाविषे यथाकाल क्षमाहोवे यथाकाल क्रोधहोवे यथा
कालदानहोवे यथाकाल संग्रहहोवे यथाकाल भयकार्यहोवे
यथाकाल दंडहोवे यथाकाल अनुग्रह कृपाहोवे सोराजा धर्म
वेत्ता कहाहै १७
नश्रुतेन नदानेन नसांत्वेन नचेज्यया त्वयेयं
पृथिवी लब्धा नसंकोचेन वाच्युत १८
हे राजन् तेने पृथिवी केवल वेदपाठके श्रवणकर्के नही प्रा।
सभई केवलदानकर्के नहीपाई केवल साम कर्के नहीपाई के
वलयज्ञकरके नहीपाई और याचनाकर्के नहीपाई यह पृथिवी
तैनेजिसप्रकारकरके पाईहै उसको श्रवणकर १८
यत्तद्बल ममित्राणां तथावीर समुद्यतं हस्त्य
श्वरथसंपन्नं त्रिभिरंगै रनुत्तमम् १९
जौनसा शत्रुगणोंका सेनाबल महावीरोंकर्के उद्यतभयाहै
हस्ती रथ तुरंग संपन्न और प्रभुशक्ति मंत्रशक्ति उत्साहशक्तिः
संयुक्त इसप्रकार त्रिगुण अंगोंके संयुक्तहै १९
रक्षितं द्रोणकर्णाभ्यां अश्वत्थाम्ना कृपेणच तत्त्व
या निहतं वीर तस्मात् भुंक्ष्व वसुंधरां २०
द्रोणकर्के कर्णकर्के अश्वत्थामाकर्के कृपाचार्यकर्के रक्षितहै
सो तैने अपने क्षत्रधर्मके रणकर्के मारा है अपने धर्मकरके
प्राप्तभये पृथिवीको अवभोग २०

श्री॰ रा॰ य॰ गी॰ ३९

39

जंबुद्वीपो महाराज नानाजनपदायुतः त्वया पु
रुष शार्दूल दंडेन मर्दितः प्रभो २१
हे महाराज यह जंबुद्वीप जो है सो नानाप्रकारकी देशदेशांत
रकी ग्रामनगरवासी लोकोंकर्के संयुक्त है सो तैने दिग् विजय
मो दंडकर्केही मर्दन किया है २१
जंबुद्वीपेन सदृशः क्रौंचद्वीपो नराधिप अपरेण
महामेरो दंडेन मर्दित स्त्वया २२
वहुर जंबुद्वीपके अनेक संपदायुक्त क्रौंचद्वीप है मेरुपर्वतके
पश्चिमभाग है सोभी दंडकर्के अपने वश किया है २२
क्रौंचद्वीपेन सदृशः शाकद्वीपो नराधिप पूर्वेण
तु महामेरो दंडेन मर्दितस्त्वया २३
क्रौंचद्वीपके समान अतिसुंदर शाकद्वीप है मेरुपर्वतसे पू
र्वदेशमो है सोभी तैने दंडकर्के अपनेवश किया है २३
उत्तरेण महामेरोः शाकद्वीपेन संमितः भद्राश्व :
पुरुषव्याघ्र दंडेन मर्दित स्त्वया २४
शाकद्वीपके समान मेरुपर्वतसे उत्तरदिशामो भद्राश्वद्वीप है
सोभी है पुरुषव्याघ्र सोभी तैने दंडकर्के मारा है २४
द्वीपाश्च सांतरद्वीपाः हीनाः जनपदा श्रयाः विगा
ह्य सागरं वीर दंडेन मर्दित स्त्वया २५
औरभी इन्होद्वीपोके आस पास द्वीप है सोभी नानाप्रकारकी ज
नसंपदाके आश्रयवने है सोभी तैने सागरोको तरकेभी दंड।
कर्के अपने वशकिये है २५
एतान्य प्रतिमेयानि कृत्वा कर्माणि भारत नप्रीय
से महाराज पूज्यमानो द्विजातिभिः २६
ऐसे भारी पराक्रमवाले कर्म तैने राजसूय यज्ञवास्ते किये हैं
ब्राह्मण लोकोके प्रसाद समस्त पूजा प्रतिष्ठाको पाइकर्के
महाराज भया है अब क्यों राज्यभोगमे प्रसन्न नही होता २६
सर्वे धारल निमान्दृष्ट्वा प्रतिनंदस्व भारत ऋषभानि
व समतान् गजेंद्रान् जितानिच २७

हे महाराज ऐसा तूं सकल पृथिवीका स्वामी बना है यह भीम
सेनादि तेरे भ्राता सभ महाधुरंधर हैं जैसे पृथिवीको उखाड़ने
को महावृष होते हैं अथवा जैसे दिग्गज होते हैं ऐसे महाप
राक्रमी हैं इन्होंका मधुरवचनवाले उत्तरदानकरके प्रसन्न
कर २७

अमर प्रतिमाः सर्वे शत्रुघाहाः परंतपाः एकोपि
हि सुखायैषां मम स्यादिति मे मतिः २८

यह सभही लोकपालोंकी न्याई शत्रुजेता हैं परमप्रतापी हैं
इन्होंविषे एक एकभी मोको अतिसुखकारी है यह मेरी बुद्धि
कहती है २८

किंपुनः पुरुषव्याघ्र पतयो मे नरर्षभाः समस्ता
नीन्द्रियाणीव शरीरस्य विचेष्टने २९

हे पुरुषश्रेष्ठ यह सभही मेरे पति मोको क्यों सुखकारी न
होवें जैसे सभही इंद्रिया शरीर चेष्टाकरणेको समर्थ होते हैं २९

अनृतं नाब्रवीत् श्वश्रूः सर्वज्ञा सर्वदर्शिनी युधिष्ठिर
स्त्वां पांचालि सुखेधास्य त्युत्तमे ३०

हे राजन् मेरी सास जो है तुमारी माता कुंती सो सर्वज्ञ है सर्व नि
मित्त जाननेवाली है कदापि मिथ्यावादिनी नहीं है सो तोको मेरे वर
दान करती भई हे युधिष्ठिर यह द्रौपदी पांचालराजकी सुता है तो
को सदा उत्तम सुखको देवेगी ३०

हत्वा राज सहस्राणि बहून्याशु पराक्रमः तद्यतं के
स प्रवसामि मोहात्तव जनाधिप ३१

तेरे जो भ्राता हैं भीमार्जुनादिक इन्होंने अपने पराक्रम बलकरके
अनेक सहस्र राजे मारे हैं महापराक्रम किये हैं से ऐसी कहती हो
तेरे शोक मोहसे इन्हका किया पराक्रम सभ वृथा भया है ३१

येषां उन्मत्तको ज्येष्ठः सर्वे ते प्यनुसारिणः तवो
न्मादा महाराज सोन्मादाः सर्वपांडवाः ३२

जिन्होंका ज्येष्ठ भ्राता तूं ऐसा विक्षिप्त चित्त भया है यह सभही
तेरी आज्ञानुसारी हैं तांते सभही पांडव तेरे मोहसे उन्मादी
भये हैं ३२

यदि हि स्युरनुन्मत्ता भ्रातरस्ते नराधिप बद्धा त्वां ना
स्तिकैः सार्धं प्रशासेयु वसुंधरा ३३

जो तेरे भ्राता स्वतंत्र उन्मादी होवे तो को बंधकर्के आप स्वतंत्र ही पृ
थिवी को राजशासना करे जो तेरे मतवाले नास्तिक हैं तिन्हों को
तेरे साथ ही बांधलेवे तो को मूढ जैसा कर देवे जौनसा अपने धर्म
कर्के कल्याण को नहीं जानता है २३

करोति मोप्यमे वंधः सञ्चेयो नापि गच्छति इषैरं
जन योगैश्च तस्य कर्मभि रेवच २४

औषधों कर्के इसके चिकित्सा होती है जो वालब उन्माद रोग क
र्के उन्मादी होवे उन्माद रोगवाला औषधों कर्के अंजनों कर्के और त
न्त्र फलादि जतन कर्के भी उसकी चिकित्सा होती है जो पुरुष अ
पने चित कर्के उन्मादी होवे उसकी चिकित्सा विचार विना न
ही होती २४

भेषजैः सचिकित्स्यः स्यात् उन्मार्गेण गच्छति सोहं
सर्वोधमो लोके स्त्रैण भरत सत्तम २५

जिसको कैंतीने हमारे को सखका हेत कहा है सो मै संपूर्ण इ
स्त्रियों विषे अधम भई है वहुत अब जीवना चाहती हूं २५

तथाविरहिता पुत्रै यौह मिच्छामि जीवितं एतेषां
वर्तमानानां नमेघ वचनं मृषा २६

तेरी भ्राता सखके यतन को करते हैं उन्हों के वचनको ते वृथा
करता है तो ते मेरा वचन अब मिथ्या नहीं है मेरे दुःखका आप
तेही कारण वना है पृथिवी को त्याग करके सभ को आपदा
दे जाता है २६

तत सर्वां मही त्यक्त्वा कुरुषे त्वं परापदं यथास्त्वां सं
मतो राजा पृथिव्यां राजसत्तमा ४·

हे राजन् जैसे पृथिवी मो मांधाता राजा अंवरीष राजा राजधर्म क
र्के समस्त राज कुल विषे परम श्रेष्ट विराजमान भये हैं तैसे तूंभी अ
व शत्रुजय कर्के विराजमान हो ४·

मांधाता चांवरीषश्च तथा राजन्स सत्तमः प्रशाधि
पृथिवीं देवीं प्रजा धर्मेण पालयन् २८ सपर्वत
वनद्वीपा माराजन् विभजाभव यजस्व विविधैः
यज्ञैः पुष्पमारी न्याधकृत्य २९

प्रजा को पालन कर पर्वत वन द्वीप संयुक्त समग्र पृथिवी देवी को
राजधर्म कर्के पालन कर उदास मन मत होवे २९

धनानि भोगा न्वासांसि द्विजातिभ्यो न्टपोत्तम ४०
न्टपोत्तम महोकर्के नानाप्रकारके यज्ञोकर्के वचनकर युद्धकर
शत्रुगणोको रणमो जीतो ब्राह्मणोको बांधवोको धनसंपदा भो
गसंपदाको देवो ४०
इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे द्रौपदीवाक्यंनाम चतुर्द
शोध्यायः १४
वैशंपायनउवाच याज्ञसेन्या वचः श्रुत्वा पुनरेवार्जु
नोब्रवीत् अनुमान्य महाबाहुं ज्येष्ठं भ्रातर मच्युतं १
वैशंपायनउवाच हेराजन् द्रौपदीके वचनको श्रवणकर्के भी
राजाने उत्तर नहीकिया तो अर्जुन महाबाहु ज्येष्ठभ्राताको त्याग
निश्चयसे अचल् जानकर्के बहुडवचन कहतामया १
अर्जुनउवाच दंडः शास्ति प्रजाः सर्वाः दंडएवाभि र
क्षति दंडः सुप्तेषु जागर्ति दंडधर्म विदुर्बुधाः २
अर्जुनउवाच हेराजन् जो द्रौपदीने वचनकहाहै सो यथार्थहै
राजदंड सर्वप्रजाको शासन करताहै दंडही प्रजाको रक्षा करता
है समस्तलोक जब निद्रा वशहोते है तब दंडही जाग्रत होताहै
पंडितलोक दंडकोधर्मका मूल कहतेहैं २
धर्मं संरक्षते दंड स्तथैवार्थं जनाधिप कामं संर
क्षते दंड स्त्रिवर्गो दंड उच्यते ३
दंडधर्मके रक्षाकरताहै दंड अर्थकी करताहै दंडकामकी
रक्षा करताहै धर्म अर्थ कामरूप त्रिवर्ग नामकर्के दंडही कहा
है ३
दंडेन रक्षते धान्यं धनं दंडेन रक्षति एवं विद्वन्नु
पाधत्स्व भावं पश्यस्व लौकिकं ४
दंडकर्के धान्यरक्षा होतीहै दंडकर्के धनकी रक्षाहोतीहै आपसर्व
जके ऐसे जानकर्के लौकिक व्यवहारको आपदेखो ४
राजदंड भयादेव पापाः पापं नकुर्वते यमदंड
भयादेके पापालोका भयादपि ५
एक प्राणी राजदंडभयसे पापको नहीकरते एकप्राणी यमदं
ड भयसे पापनही करते एकप्राणी परलोक पीडासे भयसे नही
करते ५
परस्पर भयादेके पापाः पापं नकुर्वते ।

श्री०
रा० प०
टी०
५१

एवं संसिद्धिके लोके सर्वं दंडे प्रतिष्ठितम् ६
एक प्राणी परस्पर निंदाभय से पाप नहीं करते इस प्रकार लो
क व्यवहार सिद्ध बना है सर्व लोक मर्यादा दंड में ही प्रतिष्ठि
त है ६

दंडस्यैव भयादेके न खादंति परस्परं अंधेतमसि
मज्जेयुर्यदि दंडो न पालयेत् ७
दंडके भयसे केते प्राणी परस्पर शरीर धनको नहीं खोइले
ते जो दंड प्रजापालन नहीं करे तो संपूर्ण प्राणी अंधतम
विषे मज्जन होजावे ७

यस्माद्दंडयति दमयत्यशिष्टान्दंडयत्यपि दमनात्
दंडनाच्चैव तस्माद्दंडं विदुर्बुधाः ८
प्रजाके भक्षक जीवोंके देहको दंडहि दंड करके दमन करता है
धनापहारी अशिष्ट लोकोंको वित्तापहार शासनरूप दंड करता है
इसीसे इसको बुधजन दंडनाम करके कहते हैं ८

वाग्दंडो ब्राह्मणानां क्षत्रियाणां भुजार्पणं दानदंडाः
स्मृता वैश्या निर्दंडः शूद्र उच्यते ९
हे राजन् राजाका दंड सर्व जनोंके उपर है तच्छ अपराध विषेभी
राजाने दंड कर्तव्य है ब्राह्मणोंको वाणी करके वाणी करके अना
दर करणा दंड कहा है क्षत्रीको अधिकारसे उतारके भोजन
मात्र देना दंड कहा है शूद्रको मजूरी विना सेवा करणी दंड
कहा है ९

धर्मसंमोहनाय मर्त्यानां मर्वे संरक्षणाय च मर्यादास्था
पिता लोके दंडसंज्ञा विशांपते १०
लोकोंको अपनी जातिधर्मका मोहन नहीं होवे और वर्णाश्रम
धर्म बना रहे इस वास्ते जो मर्यादा जो स्थापन कीनी उसकी द
ंडसंज्ञा प्रसिद्ध बनी है १०

यत्र श्यामो लोहिताक्षो दंडश्चरति सूद्यतः प्रजा
स्तत्र न मुह्यंते नेता चेत्साधु पश्यति ११
हे राजन् जिसको हस्त प्रहार वाला दंड होता है उसके नेत्रोंके आगे
अपकारकी श्यामता होती है जो दंड करता है उसका मुख क्रोधक
के रुधिरसरीषा रक्तवर्ण होता है तोते नहीं श्यामवर्ण और लो
हितमुख दंड विधीसे उद्यत होता है तहां प्रजा धर्मलोप करके

सोहितनहीहोतीहै परंतु दंडकरणेहारा दंडमर्यादाको विचारकर केदेषे तवही दंडधर्म होताहै ११

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थश्च भिक्षुकः दंडस्यैव भयादेते मनुष्या वर्त्मनि स्थिताः १२

हेराजन् ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी यह सभही आश्रम दंडभयसे अपने २ धर्मविषे स्थितहै औरमनुष्यभी धर्ममार्गविषे स्थितहै १२

नाभीतो यजते राजन्नाभीतो दातु मिच्छति नाभीतः पुरुषः कश्चि त्समये स्थातु मिच्छति १३

दंडके भयविना राजा यत्ननही करता दंडके भयविना दाता दाननही करता दंडकी भयविना कोई मनुष्यभी अपनी मर्यादाको स्थिर नही करसकता १३

नाछित्वा परमर्माणि नाकृत्वा कर्म दुष्करं नाहत्वा मत्स्यघातीव नाप्नोति महती श्रियं १४

पराये मर्म अंगोंके छेदकियेविना और दुष्कर कर्म किये विना और शत्रुगणके घातकियेविना मत्स्यघाती पुरुषकी न्याये कोईभी महासंपदाको नहीपावता १४

नाघ्नतः कीर्ति रस्तीह नवित्तं नपुनः प्रजाः इंद्रोवृत्रवधे नैव महेंद्रः समपद्यत १५

जो पुरुष दुष्टजनको नहीमारे तो कीर्ति उसकी नहीहोती संपदानहीहोती नप्रजा वश होतीहै इसीकारणसे इंद्रजोहै सो वृत्रको मारणेकर्के स्वर्गमो महेंद्र देवराज बनाहै १५

यएव देवा हंतार स्तां लोको वंदते भृशं हंता रुद्र स्तथा स्कंदः शक्रोग्नि र्वरुणो यमः १६

जो देवता दुष्टवधको करतेहै उनको लोक सभ अतिवंदना करतेहै रुद्रजी संहारकरताहै सो सर्वलोकका वंदनीय भयाहै ऐसीहै स्कंदस्वामी लोकका वंधनीयहै इंद्रभी सर्वपूज्य भयाहै अग्नि और वरुण और यम सभही दुष्टोंके वधसे सर्वलोकके पूज्य भयेहै १६

हंता कालस्तथावायु र्मृत्युः वैश्रवणो रविः वसवो मरुतः साध्या विश्वेदेवाश्च भारत १७

कालसंहारकरताहै मृत्युघातकरताहै कुवेरघातकरताहै अष्टवसुघातकर्ताहै मरुतगण घातकरताहै साध्यदेवता घातकारीहै विश्वेदेवभी दुष्टोंके घातकारीहै १७

प्रतान्देवा नमस्यंति प्रताप प्रणता जनाः नब्राह्म
णं नदातारं नसृष्टारं कथंचन १८
यह पते देवता दुष्टोंके घातकरताहै उन्होंके प्रतापकरकें सभही
जन नम्र शिर होकर उन्होंको प्रजा नमस्कार करतेहें ब्रह्मा और दा
ता प्रजापति सृष्टा यहदेवता घातकारी नहीहै ताते इन्हको प्रजानम
स्कार नही करते १८
मध्यस्था न्सर्वभूतेषु दांतां छम परायणान् यजंते मा
नवाः केचि न्प्रशस्ताः सर्वकर्मसु १९
हे राजन् जो देवता ब्रह्मादिक सर्वभूतो विषे मध्यस्थहै विरोध प्रेमर
हितहै देवता प्रसवोंके हितकारीहै आप दम शम परायणहै उन्हो
को कोई मनुष्य यजनकरते है जो मनुष्य यज्ञयागादि सांगोपां
ग सर्वक्रिया कुशलहै १९
नहि पश्यामि जीवंत लोके कंचिदहं मया सत्वैः
सत्वाहि जीवंति दुर्बले र्बलवत्तराः २०
प्राणधारी जीवनावाला ऐसा इसलोकविषे जीवनहीदेखा जोन
सा हिंसावर्जितवृत्तिहै जीवोंकरकेंही जीवोंकी जीवका वनीहै
दुर्बल जीवोंको वलवान जीव जीवका करलेतेहैं २०
नकुलो मूषकानत्ति विडालो नकुलंतथा विडा
लमत्ति श्वाराजन् श्वानं व्याल मृगस्तथा २१
मूखकेको नकुलखाताहै नकुलको विडालखाताहै विडाल·
को श्वानखालेताहै श्वानको चित्रमृग खालेतेहै २१
तानत्ति पुरुषः सर्वान् पश्यकालो यथागतः प्रा
णस्यान्न मिदं सर्वं जंगमं स्थावरं चयत् २२
चित्र मृगोंको मनुष्यमारखाताहै देषो सभकाकाल ऐसीही
वनाहै यह स्थावरजंगम जगत् सभप्राणोंकी भोजनका अन्न
वनाहै २२
विधानं देवविहितं तत्र विद्वा न्नमुह्यति यथासृ
ष्टोसि राजेंद्र तथा भवितु मर्हसि २३
यह प्राणोंको भोजनविधान देवगतीकरकें वनाहै इसविषे बुधज
न मोहतनही होता ताते विधाताने हे राजन् विधाताने जिसवि
धिकरकें ताको सृजीकीताहै तैसे विधिसे तें अपने स्वरूपमे विधीसो
सावधानताकरणे योग्यहै २३

विनीतक्रोधहर्षादि मंदावनमुपाश्रिताः विनाव
धं नकुर्वंति तापसाः प्राणयापनम् २४

जो तपस्वी लोकहै सो क्रोधहर्षजीतलेतेहै वनवास करतेहैं ऐसो
तपस्वीभी वनविषे हिंसा विना प्राणधारणको नही करते २४

उदके वहवः प्राणाः पृथिव्यां च फलेषु च नचकश्चि
न्नताहंति किमन्यत प्राणयापनात् २५

जलविषे वहुत प्राणी होतेहैं पृथिवीमों फलोंविषे अनेक प्राणी
होतेहैं उनको कौननही मारता हिंसा विना और कोण प्राणधार
ण वनीहै २५

सूक्ष्मयोनीनि भूतानि तर्कगम्यानिकानिचित् पक्ष्म
णोपि निपातेन येषांस्यात् स्कंदपर्ययः २६

हे राजन् जोकोई सूक्ष्मयोनिभूतहै सो प्रत्यक्षदृष्टनही होते विचार
से जानतेहै जिनकाघात नेत्रोंकी पलकमात्रसे होताहै २६

ग्रामान्निष्क्रम्य मुनयो विगतक्रोधमत्सराः वनेकुटं
वधर्माणो दृश्यंते परमोहिताः २७

जो मुनिलोक गृहसे निकसेकर वनवास करतेहै क्रोधहिंसाको
त्यागकरतेहैं वनविषेही कुटुंवपोषण करतेहैं सोभी हिंसाकर्म
को मोहितदेखेहैं २७

भूमिं भित्वौषधीश्छित्वा वृक्षादीनण्डजान्पशून् म
नुष्यास्तन्वते यज्ञांस्तेस्वर्गं प्राप्नुवंतिच २८

कंदमूलवास्ते पृथिवीको भेदकरतेहै वनको औषधी तृणोंको
छेदकरतेहैं वृक्षोंकोछेदकरतेहै पंखीगणोंको मारतेहैं ऐसी
मनुष्यो तहां उसी सामग्रीकरके यज्ञकरतेहै और स्वर्गकोजातेहै
हिंसात्याग वनमोभी नही होता २८

दंडनीतां प्रणीतायां सर्वे सिद्ध्युपक्रमाः कौंतेय
सर्वभूतानां तत्रमे नास्तिसंशयः २९

हे कौंतेय दंडनीतिके विधानमों सर्वभूतोंके जीवनादिप्रारं
भ सिद्धहोतीहै इसमें मोको संशयनहीहै २९

दंडश्चेन भवेल्लोके मनश्येयुरिमाः प्रजाः जलेम
त्स्यानिवाभक्ष्यान् दुर्वलान् वलवत्तराः ३०

तौते हेराजन् लोकविषे जो दंडनही होवे तो यह सभही प्र
जानाश होताहै जलविषे मत्स्योंकी न्याई दुर्वलोंको वलवान
प्राणी मार खावेगे ३०

श्री· रा· प· टी· ५२ 63

सत्यं चेद् ब्राह्मणैः एवमुक्तो दंडः प्रजारक्षति साधु
नीतः पक्षाणामयस्य प्रतिशास्य भीताः सनजिता
दंडभयाज्ज्वलति २१
ब्रह्माजीने पूर्ववचन सत्यविधानसे कह्याहै जो दंडहै सो प्रजाको
सावधानतासे रक्षाकरताहै यहवार्ता तुमदेखो अग्निजोहै सो हि
तीयघासके दंडभयसे शीघ्र प्रज्वलित होतीहै २१
अंधंतमइवेदं स्यान्न प्रज्ञायेत किंचन दंडश्चेन्न भवे
ल्लोके विभजन्साध्वसाधुनी २२
जो इसलोकविषे दंडनही होवे तो समग्र जगत अंधतम जैसा हो
जावे अपना पराया कछु ज्ञाननही होवे साधु असाधु मर्यादाभी
खंडित होजावे २२
येपि संभिन्नमर्यादा नास्तिका वेदनिंदकाः तेपि
भोगाय कल्पंते दंडेनाशुनिपीडिताः २३
जोनसे दुष्टपुरुष मर्यादाभेद करतेहै नास्तिकहै वेदनिंदाको।
करतेहै सोभी दंडकी पीडाकरके शीघ्रही मर्यादासे पालन सकल
धर्म मर्यादाके भोगसाधक होतेहै २३
सर्वो दंडजितो लोके दुर्लभोहि शुचिर्जनः दंडस्यहि
भयाद्भीतो भोगायैव प्रवर्तते २४
हे राजन् सभही लोक दंडसे जीता जाताहै स्वभावकरके पवित्रा
चारवाला जन इसलोकविषे दुर्लभहै दंडके भयसे उग्रस्वभावभी
मर्यादा पालनेको प्रवृत्त होताहै २५
चातुर्वर्ण्य प्रमोदाय स्वनीत नयनाय च दंडो विधा
त्रा विहितो धर्मार्थो वभिरक्षितो २५
विधाताने दंडजोहै सो चातुर्वर्ण्यके सुखवास्ते सुंदरनीतिके
अभ्यास वास्ते ओर धर्म ग्रंथकी रक्षावास्ते कल्पनकियाहै २५
यदि दंडान्न बिभेयुर्वयांसि आपदानि च श्वादंष्ट्र
पशून् भक्षयेयुश्च यज्ञार्थानि हवींषि च २६
श्वादि पंछी सिंहादि मृगजो दंडसे भयभीत नहीहोवे तो म
नुष्योंको खालेवे ओर यज्ञके साधन जो होम द्रव्यादिक तिन्हो
कोभी खालेवे २६
नब्रह्मचार्यधीयेत कल्याणी नदुहेतगाम् नक
न्योद्वहेत गच्छेद्यदि दंडो नपालयेत् २७

जो दंड सर्वप्रकारसे पालननहीकरे तो वेदको कोई नहीपढे ग़ेर सु
शील गौका दुग्ध दोहन नहीहोवे धर्म्मविवाहभी धर्मसे नहीहोवे
विप्लोपः प्रवर्तेत भिद्यरन्सर्व सेतवः ममत्वं न प्र
जानीयु यदिदंडो नपालयेत् ३८
जो दंडकर्के लोकपालन नही होवे तो सर्वत्र धर्म लोपहोजावे
सभही धर्म मार्यादा खंडितहोजावे सभहीलोक ममताकी मर्यादा
को नकरे सर्वत्र वलवानजाति अपनी ममता कोहीकरे ३८
नसंवत्सर सत्राणि तिष्टेयु रकुतोभयाः विधिवद्द
क्षिणावंति यदिदंडो न पालयेत् ३९
जो दंडपालन नहीकरे तो संवत्सर विधान मंत्र निर्भयतासे विधिव
त दक्षिणावाले कदापि प्रवृत्तनही होते ३९
चरेयुर्णा श्रमेधर्मे यथोक्त विधिमाश्रितः नविद्यां
प्राप्नुया किंचि द्यदिदंडो नपालयेत् ४०
जो दंडपालना नहीकरे तो अपने आश्रम विषे चारोवर्ण धर्ममर्यादकी
विधिको नही आश्रयकरे विद्याभ्यास कवीही नहीवने ४०
नचोष्ट्रा नवलीवर्दा नाश्वाश्वतर गर्दभाः युक्ताव
हेयु र्यानानि यदिदंडो नपालयेत् ४१
जो दंडकी पालना नावने तो उष्ट्र वलीवर्द वृषभ अश्व ग़ेर खचर
गर्दभादिक यथार्थ मर्यादाकर्के भारको नहीउठावे ४१
नप्रेष्या वचनं कुर्यु नवाला जातु कर्हिचित् तिष्टेपि
त्पती धर्मे यदिदंडो नपालयेत् ४२
जो दंडपालना जगतमो नावने तो भृत्यलोक स्वामीवचनको ग़ेर वा
लकभी पिताके मतमो कदापि नही ठहरे ४२
दंडेस्थिताः प्रजाःसर्वा दंडेसर्वे विडंवयाः दंडेसर्वो
मनुष्याणां लोकोयत्र प्रतिष्ठितः ४३
दंडमो सर्वप्रजा अपने धर्मसे स्थितहै दंडमो सर्वजगतस्थितहै दंड
विषे मनुष्योकी स्थितिवनीहै लोकप्रतिष्ठाभी दंडमो प्रतिष्ठितहै ४३
न तत्रकूटं पापंवा वंचनापि नदृश्यते यत्रदंडः सु
विहित श्चरत्यरि विनाशिनः ४४
जहां सर्वशत्रु जयकारी दंडदेवता विधिसे विचरताहै तहांकूटधर्म
नहीहोता पापनहीहोता वंचना नहीहोती ४४
हविश्वापि लिहेद्दष्ट्वा दंडश्चेद्रोदतो भवेत्

श्री॰ रा॰ प॰ टी॰ ४४

हरेत्काकः पुरोडाशं यदि दंडो न पालयेत् ४५
जो दंड का उद्यय नही होवे तो सोमद्रव्यको स्वानवाटलेवे जहां दंडनही होवे तहां काकयज्ञ भागको हरलेजावे ४५

यत्त्वं दंडधर्मतो राज्यं विहितं यद्धर्मतः कार्यं तत्र न शोकौ वै भुंक्ष्व भोगान् त्यजस्व वै ४६
हेराजन् जोनसा यह राज्य धर्मसे भयाहे जो तुमने इसको धर्मसे पालन करे तो इसविषे शोकनही करणा अपने धर्मनिश्चयको दृढधारणकर्के राज्यभोगोंको तुमभोगो ४६

सर्वेण धर्मं श्रीमन् स्थ्रीते शुचिवाससः संवसेतः प्रियैदारैर्भुंजान स्थान्न मुत्तमम् ४७
तुम राज्यधर्मको पालनकरो सर्वसंपदावाले सुखकर्के धर्मकार्यको करतेरहो और शुद्धवस्त्र शुद्धनिवासकोपावेगे सभहीलोक अपने अतिप्रिय कुटुंबसाथ उत्तम अन्नको भोजन करेंगे ४७

अर्थे सर्वे समारंभाः समायत्ता न संशयः स च दंडे समायत्तः पश्य दंडस्य गौरवम् ४८
ऐसा करणे कर्के सभही शुभकार्यके प्रारंभवनेगे यज्ञप्रारंभवनेगे यज्ञप्रारंभभी सावधानहोवेगे जो कछु शुभकार्यहे दंडके अधीन हो ताहे इसप्रकार तुमदंडके माहात्म्यको विचारदेखो ४८

लोकयात्रार्थमेवेह धर्मप्रवचनं कृतं अहिंसा साधुहिंसेति श्रेयान्धर्मपरिग्रहः ४९
हे महाराज धर्मका वचन विस्तार लोकयात्रावास्ते कियाहे इसविषे अहिंसा दंडधर्म अच्छी नहीहे हिंसाही अच्छी अपने धर्मका फल नही श्रेष्ठहे ४९

नात्यंतं गुणवत्किंचि न्नचाप्यत्यंत निर्गुणं उभयं सर्व कार्येषु दृश्यते साध्वसाधु वा ५०
इसलोक व्यवहारविषे अत्यंत गुण संयुक्त कछु वनानही अत्यंत गुणहीनभी कछु नहीवना सर्वकार्यो विषे गुण अवगुण दोनो दृष्टहोते हैं ५०

पशूनां वृषणं छित्वा ततो भिंदंति मस्तकं वहंति वहवो भारं स्वभ्नंति दमयंति च ५१
देखो प्रथम पशुयोनीके वृषणोंको छेदन करतेहे वहुत एंगष्टि अत्यंतनहीहोवे इसहेतुसे शिरको गृहणकरतेहे फेर उन्हे सेही जलवाहनादिकार्य करावतेहे वहुत पशुवंधन करतेहे वहुत दंडप्रहार दंडभी करतेहें ५१

एवं पर्याकुले लोके वितथे जर्जरीकृते नैस्तैन्यीये म
हाराज पुराणं धर्ममाचर ५२

इस प्रकार यह लोक व्यवहार सिंहादि दोषकरके पूर्णहै इसका गुणागु
ण विचार वृथाहै दंडकरकेही पशुयोनीसे भारवाहनादि कार्य होता
नहै इत्यादि अवर न्याय युक्तिकरके विचारकरो जैसे पूर्वले लोकपुरा
तन धर्मको करतेभये तैसे तुमभी अपने धर्मको करो ५२

यजस्व देहि प्रजा रक्ष धर्मं समनुपालय अमित्रान् ज
हि कौंतेय मित्राणि परिपालय ५३

हे महाराज अपने धर्मकरके यज्ञकरो दानकरो प्रजाकी रक्षाकरो
लोकधर्मको पालनकरो शत्रुगणको मारो मित्रोकी रक्षाकरो ५३

मा चैते निघ्नतः शत्रून् मन्युर्भवति पार्थिव नतत्र कि
ल्बिषं किंचित् कर्तुर्भवति भारत ५४

तोको शत्रुदुष्ट मारणेविषे मनविषे क्रोधशंकाका दोषनहीहोवे
दुष्टशत्रुके मारणविषे कर्ताको पापनहीहै ५४

आततायीहि योहन्यादाततायिनमागतं नतेन ब्र
ह्महा सस्यान्मन्युस्तं मन्युमृच्छति ५५

जो कोई अपने धनका धर्मको हरण करताहै सो आततायी हो
ताहै उसको आपभी आततायी होकरमारे तो उसवधकरके व
धकर्ताको दोषनहीहोता उसका पापही वधकर्ताको क्रोधरूप
तासे मारताहै ५५

अवध्यः सर्वभूतानां मंतरात्मा नसंशयः अवध्ये
चात्मनि कथं वध्यो भवति भारत ५६

आत्मा सर्वभूतो विषे अवध्यहै इसमो संदेह नहीहै जो अवध्य
है तो किसीसे सो मरता नहीहै ५६

यथाहि पुरुषः शालां पुनः संप्रविशेन्नवां एवं जी
वः शरीराणि तानि तानि प्रपद्यते ५७

जैसे कोई पुरुष नवी पर्णशाला बनाइकर पुराणी शालाको
त्यागकरके प्रवेशकरताहै जैसे जीवभी नयेशरीरको प्रवेश
करताहै पुराणी देहको त्यागकर नयेशरीरका अभिमानी
होताहै ५७

देहान् पुराणान् मुत्सृज्य नवान् संप्रति पद्यते एवं मृत्यु
मुखान् माहुर्जनाये तत्वदर्शिनः ५८

हे राजन् जो तत्ववेत्ता जनहै सो इसप्रकार जन्ममरण रूप दुः
खको प्रवाहरूप जानतेहै ५८

श्री. इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे अर्जुनवाक्यंनाम पंचद
रा. प्र. शोध्यायः १५
टी. वैशंपायनउवाच अर्जुनस्य वचः श्रुत्वा भीमसेनो
४९ त्यमर्षणः धैर्यमास्थाय तेजस्वी ज्येष्ठभ्रातर मब्रवीत् १
45 वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय इसप्रकार अर्जुनके वचनको
श्रवणकरके भीमसेनअतिक्रोधवालाहै सो महाधैर्यकरके अति ते
जस्वी अपने ज्येष्ठभ्राताको वचनकहता भया १
राजन् विदित धर्मोसि नतेस्त्य विदितं क्वचित् उप
शिक्षामते वृत्तं सदैव नच शक्नुमः २
हे राजन् आपधर्म वेत्ताहै जोको अज्ञान कछुनहीहै हमतेरे च
रित्रकी शिक्षाके अनुसार होतेहै परंतु सर्वकाल करणेको
नही समर्थ होते २
नवक्ष्यामि नवक्ष्यामी त्येवं मनसि संस्थितं अतिदुः
खान्तु वक्ष्यामि तन्निबोध जनाधिप ३
ऐसे धर्मज्ञराजाके सामने अपने प्रज्ञाका वचननही कहना ऐ
से मनको वहुतरोकाहै अब अतिदुःखसे कहता हूं हेप्रभो उ
सको विचारो ३
भवतः संप्रमोहेन सर्वं संशयितं कृतं विक्लव।
त्वेच नः प्राप्त मवलत्वं तथैवच ४
आपकी धर्ममूढताकरके हमारा सबभोग समही अतिसंश
यको प्राप्तभयाहै वहुत कायरता भईहै अवलताभी भईहै ४
कथं हि राजा लोकस्य सर्वशास्त्र विशारदः मोह
मापद्यसे दैन्या यथाका पुरुषस्तथा ५
हे राजन् तं सर्वलोकका राजाहै सर्वशास्त्रोके विचारमें चत
रहोकर बुद्धिमोहको कायर जैसा कैसे प्राप्तहोताहै ५
आगतिश्च गतिश्चैव लोकस्य विदिता तव आय।
त्याव तदात्वेच नतेस्त्य विदितं प्रभो ६
जैसे लोकोकी गती जाती है आगतीभी जानीहै कार्यके अंत
कालमें परिणामफल वर्तमानकालमें युक्तिमार्ग जोको अ
ज्ञातनहीहै ६
एवंगते महाराज राज्यंप्रति जनाधिप हेतुमत्र प्र
वक्ष्यामि तमिहैक मनाः शृणु ७

हे महाराज इसीप्रकार तुह्मारे मनमो सभवीतगयाहै तव राज्य
प्राप्तिकालमों जो हेतवनाहै उसकोएकाग्र मनकर्के श्रवणकरो ७

द्विविधो जायते व्याधिः शारीरो मानसस्तथा परस्परं
तयोर्जन्म निर्द्वंद्वं नोपलभ्यते ८

दो प्रकारकी व्याधि सभको वनीहै एकशरीरकी व्याधी रोगा
दिकही एका मानसव्याधी चिंता शोकादिकहै इन्हका परस्पर
जन्मवनाहै इसको परस्पर साध्य साधकता विना दुःखकी अ
संभवता दृष्टनही होती ८

शारीरा जायते व्याधिः मानसो नात्र संशयः मानसा
जायते व्याधिः शारीर इव निश्चयः ९

शारीरव्याधिसे मानसव्याधी होतीहै मानसव्याधीसे शारीरव्याधी
होतीहै इसमो संशय त्यागकर्के निश्चय कर्तव्यहै ९

शारीरं मानसं दुःखं यो तीत मनुशोचति दुःखेन
लभते दुःखं द्वावनर्थौच विंदति १०

जोपुरुष वीतगई शारीर व्याधीके दुःखको अथवा मानसव्या
धीके दुःखको शोचताहै सो पुरुषो दुःखकर्के नयेदुःखको
प्राप्तहोताहै उसको द्विगुण दुःखप्राप्त होताहै १०

शीतोष्णे चैव वायुश्च त्रयः शारीरजा गुणाः तेषां गु
णानां साम्यं यत्तदाहुः स्वस्थलक्षणं ११

शारीर व्याधीके भेदको कहतेहैं शीत उष्ण जिनकी प्रकृतीहै
सोकफ पित्तहै तीसरा वातहै यह तीन शारीर व्याधीहै इनतीनों
के गुणशरीरमो समानहोवे तो शरीरस्वस्थ वना रहताहै ११

तेषामन्य तमोद्रेके विधान मुपदिश्यते उष्णेन वा
ध्यते शीतं शीतेनोष्णं प्रवाध्यते १२

इन तीनोविषे एकअधिक होवे तो रोगीशारीर होताहै उसका
विधानकहतेहै उष्णचिकित्सासे कफका वाधहोताहै शीतचि
कित्सासे पित्तका वाधहोताहै १२

सत्वं रजस्तम इति मनसः स्युः त्रयोगुणाः तेषांगुणा
नां साम्यं यत्तदाहुः स्वस्थलक्षणं १३

अव मानसव्याधि कहतेहैं सत्वगुण रजोगुण तमोगुण इहती
नोगुण मानस व्याधीके मूलहै तीनगुणोंकी समानता मनकी
स्वस्थता होतीहै १३

तेषा मन्यतमो द्रेके विधान मुप दिश्यते

श्री. हर्षेण बाध्यते शोको हर्षः शोको न बाध्यते १४
ग. य. इन्द्रनी तो विषे एककी अधिकता होवे तो तहांभी विधान कहते हैं
टी. हर्षकरके शोकका बाधहोता है शोककर्के हर्षका बाधहोता है १४
४९ कश्चित्सुखे वर्तमाने दुःखस्य स्मर्तु मिच्छति कश्चिद्दुः
खे वर्तमानः सुखस्य स्मर्तु मिच्छति १५
56 कोई मूढपुरुष स्त्रीभोगकालविषे नष्टभये पुत्रस्मरणकर्के
हर्षशोक कर्के दुःखबाधाकरता है कोई चतुरपुरुष दुःखका
लमों सुखसंपदाको स्मरण करताहो शोकको हर्षकरके बाधा
करता है १५
सत्वं न दुःखी दुःखस्य न सुखीच सुखस्यदा न दुःखी
सुखजातस्य न सुखी सुखजस्य वा १६
हे राजन् तूं तो सुखदुःखके प्रसंगसे त्रैकालविषेभी मानसमु
खदुःख शरीरदुःख स्मरण करके सुखदुःख स्मरणकरणे योग्य
नहीं है सुखकालमों दुःखस्मरण नहीकर दुःखकालमो दुःख
कोनहीजान जो एवंले सुखदुःखको स्मरण तोको योग्यनहीं है १६
स्मर्तुं मर्हसि कौन्तेय दिष्टं हि बलवत्तरं अथवाते
स्वभावोयं येन पार्थिव क्लिश्यते १७
जो तूं एवंले दुःखको स्मरणकरता है तो दैवगती बलवान है
अथवा तेरा स्वभाव दुःखको स्मरणकर्के दुःखी होता है अतिक्ले
श मानता है तो श्रवणकर १७
दृष्टा सभागतां कृष्णा मेकवस्त्रां रजस्वलां मिषतां
पाडुपुत्राणां न तस्य स्मर्तुं मर्हसि १८
तेने द्रौपदी एकवस्त्रा और रजस्वला हमारे देखतेही कौरव स
भामें अपमान कीनी है उस दुःखको भी स्मरण नहीकरता १८
प्रव्राजनं च नगरा दजिनैश्च विवासनं महारण्य नि
वासं च न तस्य स्मर्तुं मर्हसि १९
रसे हमको निकालदिया और मृगाजिन पहरेके महावनविषे।
दीर्घकाल वासभया उसको भी नहीं स्मरनकरता १९
जटासुरात्परिक्लेशं चित्रसेनेन चाहवं सैंधवाच्च परि
क्लेशं कथं विस्मरन वानसि २०
जटासुरका क्लेशभया है चित्रसेन गंधर्वके साथ महायुद्ध भया
है और जयद्रथकर्के द्रौपदीको दुःखभया उसको भी नहीं
स्मरण करता २०

अज्ञातवासे चर्यायां कीचकस्य पदाहतं द्रौपद्या राजपुत्र्याश्च कथं विस्मृतवानसि २१

वहरे विराट नगरमो अज्ञातवासभया तहां द्रौपदीको कीचकने पाद प्रहार किया उस दुःखको तैने कैसो विस्मरण किया है २१

यस्तते द्रोणभीष्माभ्यां युद्धमासीदरिंदम मनसैकेन तद्युद्धमिदं घोरमुपस्थितं २२

जो तेरे साथ भीष्मद्रोणके साथ एक मनकर्कै युद्धभया जैसे द्रोणादिक तेरे मनसे पृथग भये तैसे तेरेसे मनभी पृथग है जो तूं मनको एकाग्रतासे निर्विकल्पकरे तो मनोनाशकर्कै निर्विक्षेप सुख होताहै २२

यत्र नास्ति शरैः कार्यं न मित्रैर्नैव बंधुभिः आत्मनैकेन योद्धव्यं तत्तेयुद्धमुपस्थितम् २३

हे राजन् अब तोको मनविषे सर्वशोकका युद्धबनाहै जिसविषे बाणादि शस्त्रोंका युद्धनहीं बनता उसविषे नमित्रोंका सहाय है नबांधवोंका सहाय बनताहै केवल एक आत्मविचारकरके युद्धहोताहै सो युद्ध तोको उपस्थितभयाहै २३

तस्मिन्न निर्जिते युद्धे प्राणान्यदि विमोक्ष्यसे अन्यं देहं समास्थाय ततस्तै रपि योत्स्यसे २४

जो मनको जीतनेबिना तूं प्राणत्यागकरेगा और देहको पायकरकेभी मनके हर्षशोक वासनाका युद्ध एवं संस्कारसे बनेगा २४

तस्मादद्यैव गंतव्यं युध्यस्व भरतर्षभ परमव्यक्तरूपस्य व्यक्तं त्यक्त्वा स्वकर्मभिः २५

तोते अबही मनोजयके युद्धकरणेको विचाररूप यात्राकर्तव्यहै अपने जो यम नियमादि अष्टांग योगरूप यत्नहै तिन्होकरके प्रगटहृप्यमान स्थूलदेहको त्यागकर्कै अव्यक्तरूप जो मनहै इसको जयकरणेका शत्रुहै आत्माकी एकरूपताकी प्राप्तिवासते उसमनकेसाथ युद्धकरणेकी सावधानताकर २५

तस्मिन्न निर्जिते युद्धे कामवस्थां गमिष्यसि एतज्जित्वा महाराज कृतकृत्यो भविष्यसि २६

जो तुमने मनको हर्षशोकादि त्यागकर्कै नहीं जेता तो अनिर्वाच्य दुःखदशाको प्राप्तहोवेगा इसको जीतकर्कै कृतकृत्य होवेगा २६

श्री. कृत होवेगा २६
रा. ध. एतां बुद्धिं विनिश्चित्य भूतानामागतिं गतिं पितृपैता
टी. महं वृत्तं शाधिराज्यं यथाविनम् २७
ध७ जोतुम मनदेहसे असंग आत्मविचारकी बुद्धिका निश्चय करोगे
और भूतोंकी सुखदुःखदशाकी मनोमयकल्पनासे निश्चयकरकें
पितृपितामहके राज्यको यथाविधि शासनकरो २७
दिष्ट्या दुर्योधनः पापो निहतः सानुगो यदि द्रौपद्याः
केशपाशस्य दिष्ट्यात्वं पदवीं गतः २८
वहुत शुभभया जो दुर्योधनको सपरिवार रणमो माराहे द्रौप
दीका केशपाशजो दुष्टोने आकर्षण कियारहा उसकी अनुसरण
पदवीको हम अव प्राप्तभयेहै २८
यजस्व वाजिमेधेन विधिवद्दक्षिणावता वयंते किं
कराः पार्थ वासुदेवश्च वीर्यवान् २९
हेराजन् अवतुं वहुत दक्षिणावाले अश्वमेधयज्ञकरो हम स
भहीभ्राता किंकरतुमारेहै और महापराक्रमी श्रीकृष्णभी तेरी
आज्ञाको करणेका वालेहै २९
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भीमवाक्यं नाम षोड
शोध्यायः १६
युधिष्ठिरउवाच असंतोषः प्रमादश्च मदोरागः प्रशां
तता वलंमोहोभिमानाश्च उद्वेगश्चैव सर्वशः १
युधिष्ठिरउवाच हेभीमसेन जो तैनेकहाहै मनके असंतोषको
त्यागकरकें हर्षशोक रहित होकरके राज्यकरो यहत्यागवच
नमानकरके नहीहोता किंतु मनके निरोधकरके होताहै चित्त
की एकाग्रता नियम वैराग्यशांति धैर्यविवेक अहंकारत्याग
यहराज्यमो नहीहोते राज्यमो इन्हकी विपरीतता होतीहै असं
तोष और प्रमाद और मद और राग होताहै अशांति होतीहै वल
होताहै मोह और अभिमान और उद्वेग सर्वप्रकारसे होताहै १
एभिः पाप्मभिराविष्टो राज्यं त्वमभिकांक्षसे निरा
मिषो विनिर्मुक्तः प्रशांतः सुसुखी भव २
एते यह सभही पापमूलहै इन्होके आवेश करकें तूराज्यकी वां
छाकरताहै तूराज्यभोगरूपी मांसभोजनत्यागकरके पापकर्म
से मुक्तहोकर सदासुखीहो संतोषादि निष्ठहो परम सुखी
होताहै २

यश्मा सखिलां भूमिं शिष्या देको महीपतिः तस्मा
य्युदर मेकैवे किमिदं ते प्रशंससि ३
जो राजा इहां समग्रपृथिवीको एक छत्र करकै शासनकरे
उसको अपने देहके एक उदरकी शरणाहोती है तो राज्यभोग
को प्रशंसा करताहै ३
नाह्ना शरयितं शक्या नमांसे र्भरतर्षभ अपर्यो द
रयत्रिष्ठा मानुषापि नशक्नुयात् ४
यह तृस्नारूपीउदर एकदिनकरकै शरणनही मास वर्षों नही
शरणकियाजाता इछारूपी समुद्र महागंभीरहै इसकी शांती त्र
स्नाकी आयुषा करकैभी नही होती ४
यदीदः प्रज्वलत्यग्नि रसमिद्धः प्रशाम्यति अल्पा
हार तयाप्यग्निं शमयेत दर्पमुत्थितम् ५
जैसे अग्निसमिधा काष्ठोंकरकै शांतनहीहो समिधा काष्टविना
प्रशांत होताहै यह उदरकी अग्नितृस्नाकरकै उदयभयाहै इस
को अल्पाहारताके अभ्यासकरकै प्रशांतकरो ५
आत्मोदरकृते प्रान्तः करोति विघसं बहु तयोदरं
पृथिव्याते श्रेयो निर्जितया जितम् ६
यह प्रान्तपुरुष अपने उदरशरणवास्ते अतिकठिन यत्नकोक
रताहै इस उदरकीतृस्नाको तमजीतनेसे कल्याण होताहै पृ
थिवी जीतनेसे कल्याण नहीहोता ६
मानुष्या कामभोगांस्त्व मैश्वर्यंच प्रशंससि अभो
गिनो बलाश्चैव यांतिस्थान मनुत्तमम् ७
हे भीम तू मनुष्य लोकके भोगके स्तुतिकरताहै ऐश्वर्यको
स्तुति करताहै जो पुरुष भोगत्याग करतेहै और तपकरके
क्षीणवलभयेहै सो अतिउत्तमस्थानको प्राप्तहोताहै ७
योगो क्षेमस्य राष्ट्रस्य धर्मा धर्मौ त्वयिस्थितौ मुच्यस्व
महतो भारा त्याग मेवाभि संश्रय ८
तेरेको अलभ्यवस्तका योगवनाहै लब्धपदारथका रक्षणाद
नाहै धर्मराज संबंधभी वनाहै धर्म अधर्मका संबंधभी यह
तोको महाभारहै इसकेत्यागको हेतुकल्याण इपजान ८
एकोदरकृते व्याघ्रः करोति विघसं बहु तमस्य मु
प जीवंति मंदा लोभ वशामृगाः ९
देखो व्याघ्रमृगाहै सो एक उदरके वास्ते महाउग्रपापको कर

श्री० रा० प० टी० ५८

48

ताहै उसके पीछे और तृष्णारागभी मूढतासे लोभके वशवर्ती होते हैं ९

विषयान्प्रतिसंगृह्य संन्यासं कुर्वते यदि न च तुष्यति राजानः पश्य बुद्ध्यंतरं यथा १०

जो पुरुष विषयों को अंगीकार करके संन्यासको कर्ता यह तुम विचारो राजा लोक कदापि संतोष नहीं करते हो जैसे बुद्धीका विपर्यय होता है तैसे तुम विचार देखो १०

अन्नाहारैरश्मकुट्टैः दंतोलूखलिकैस्तथा अभक्षैर्वायुभक्षैश्च तैरयं नरको जितः ११

इसी हेतुको कहते हैं जो नसे मुनि पत्राहार करते है पाषाणक के पत्र मूलादिकको कूटखाते है दंतोकोही उखलकर्के शाक पत्रादि भोजन सूक्ष्मकरके खाते हैं केवल जलमात्र आहार करते हैं अथवा केवल पवनाहारको करते है तिन्होने संसाररूपी नरक होता है ११

यश्चेमां वसुधां कृत्स्नां प्रशासेदखिलां नृपः तुल्याश्म कांचनो यश्च स कृतार्थो न पार्थिवः १२

जो राजा समुद्र सहित पृथिवीको दंडकर्के शासना करता है जो पुरुष पाषाणके कांचनको त्यागबुद्धिकर्के एकसमान जानता है सो कृतार्थ होता है राजा कृतार्थ नहीं होता १२

संकल्पेषु निरालंबो निराशो निर्ममो भव अशोकं स्थानमातिष्ठ इहचामुत्र चाव्ययं १३

हे भीमसेन तू संकल्पोंविषे आलंबन मतकरो और भोगआशा रहित हो और भोगरूपी मांसको त्यागकर शोकरहित स्थानको आश्रयकर्के यहलोक परलोकविषेभी जो अखंडपद कहा है उसमें प्रतिष्ठाकर १३

निरामिषा न शोचंति शोचसि किं त्वमामिषं परित्यज्यामिषं सर्वं मृषावादात्प्रमोक्ष्यसे १४

हे भीमसेन जो भोगरूपी मांसको त्यागकरते हैं सो पुरुष शोच नहीं करते अवतू भोगरूप मांसको शोचता है सर्व प्रकारका भोगरूप मांसको त्यागकरके मिथ्यात्यागके दोषसे मुक्त होवेगा १४

पंथानौ पितृयानश्च देवयानश्च विश्रुतौ इजानः पितृयानेन देवयानेन मोक्षिणः १५

इस पुरुषको देवयान पितृयान दो मार्ग है पितृयान जो कर्ममार्ग और देवयान जो उपासना मार्ग करके मार्गी पुरुष मोक्षगामी होता है १५

तपसा ब्रह्मचर्येण स्वाध्यायेन महर्षयः विमुच्य देहांस्ते यान्ति मृत्योर विषयगताः १६

तपकरके ब्रह्मचर्यकरके स्वाध्याय वेदपाठकरके महाऋषिजो है सो देहको त्यागजाते है सो बहुड मृत्युपास गोचर नही होते १६

आमिषं बंधनं लोके कर्मेहोक्तं तथामिषं ताभ्यां विमुक्तः पापाभ्यां पदमाप्नोति तत्परम् १७

राज्यभोग रूपी मांस बंधनरूप कहाहै तैसे कर्ममार्गके चेष्टाभी बंधन कहाहै यह दोनो पापरूपहै इन्ह दोनोसे मुक्तभयाजो सो दोनो परे जो अक्षयपद उसका प्राप्त होताहै १७

अपिगाथां पुरागीतां जनकेन वदंत्युत निर्द्वंद्वेन विमुक्तेन मोक्षं समनुपश्यता १८

इसके उदाहरणवास्ते जनकराजा गाथा कहेही उसको कहतेहैं जनकराजा निर्द्वंद्व भयाहै तातें बंधमुक्त भयाहै मोक्षमार्गको विचार करता १८

अनंतं बत मे वित्तं यस्य मे नास्ति किंचन मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे दह्यति किंचन १९

मोको अनंतधन मिलाहै जिसको पाइकर राजा बनाहै परंतु वास्तव विचारकरके मेरा कछु नहीहै मिथिला दग्ध होवे तो मेरा कछु दग्ध नही होता १९

प्रज्ञा प्रसाद मारुह्य अशोच्यान् शोचतो जनान् जगतीस्था निवाद्रिस्थो मंदबुद्धि नवेक्षते २०

हे भीम तूं आपमूढ है विचार बुद्धिके उच्चस्थानको आरोहण बिषे अशक्त है दुर्योधनादिकरण मृत्यु करके स्वर्गको गये है उन्हका शोचन करना नहीं उन्हको शोचने हारे उन्हके ही कुटुंब है उन्हको तूं दयाकरके नही देखता आपराज्य भोगके आशाकरता है परदुःखकरके सुखवांछा करताहै तातें मूढ है २०

दृश्यं पश्यति यः पश्यन् स चक्षुष्मान् स बुद्धिमान् अज्ञातानां च विज्ञाना संबोधा बुद्धि रुच्यते २१

जो कार्य दृश्य है विचार दृष्टि करके कर्तव्य अकर्तव्यको देखता है सो दृष्टिवाला है और बुद्धिवाला भी है और कर्तव्यज्ञानकी अज्ञा

श्री॰ शा॰ प॰ टी॰ ४९

49

तत्त्वकों जो बोधकरावतेहैं सो बुद्धिवानहैं सर्वप्रकारसे बोध
वान बनाहै २१
यस्तु वाचं विजानाति बहुमानमियात्स वै ब्रह्मभावप्र
पन्नानां वैद्यानां भावितात्मनाम् २२
जो पुरुष विद्या विचारवाले ज्ञानी गुरुजनादिक उन्हकी वाणी
को जानताहै सो ब्रह्मभावको प्राप्तभये जो आत्मज्ञानी लोक
तिन्होके मान्यहोतेहैं २२
यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति तत एव च
विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा २३
तत्त्वको कौन जानताहै जिसकाल विषे पुरुष आकाशादि भूतों
की भिन्न भिन्न सत्ताको एक चिदात्मा विषेही लीनभई जानताहै
जैसे घट कुंडादिकोकी भिन्नभिन्न स्वरूप सत्ताको मृत्सत्ता मात्र
होतीहै तैसे शास्त्र सद्गुरोंकी उपदेशकरके साक्षात्कार करताहै
बहुरु उसी एक चिदात्मासे उत्पत्तिभी जानताहै तब ब्रह्मतत्त्वको
प्राप्तहोताहै तबही तत्त्ववेत्ता होताहै २३
ते जना स्तां गतिं यान्ति नाविद्वांसोऽल्पचेतनः नाबुद्ध
यो नातपसः सर्वं बुद्धौ प्रतिष्ठितम् २४
जिनको सर्वत्र चिन्मात्र सत्ताका तत्त्वज्ञान भयाहै सोई ब्रह्मभा
वको प्राप्तहोतेहैं तुम्हारे जैसे केवल शास्त्रज्ञानके गर्ववाले नहीं
प्राप्तहोते यातें सो अल्पबुद्धिहैं बहिर्मुखहैं इसीसे अबुद्धिहैं
काहेसे अतपस तपसे रहितहैं त्यागरूपी तपसेही बुद्धिविषे
तत्त्वबोध होताहै तांते सभही परमार्थ तत्त्व विचारवाली बुद्धि
विषे प्रतिष्ठितहैं २४
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे युधिष्ठिरवाक्यं स
प्तदशोऽध्यायः १७
वैशंपायन उवाच तूष्णींभूतं तु राजानं पुनरेवार्जुनो
ऽब्रवीत् संतप्तः शोकदुःखाभ्यां राज्ञो वाक्शल्यपीडितः १
वैशंपायन उवाच हे जनमेजय कहिकर जब राजा तूष्णीभ
या तब अर्जुन राजाको बहुरु कहताभया कैसाहै प्रथम तो
शोक करके दुःखकरके पीडित भयाहै बहुरु राजाके वाणी
रूपशल्य करके पीडित भयाहै १
अर्जुन उवाच कथयन्ति पुरावृत्तमितिहासमिमं जनाः
विदेहराज्ञः संवादं भार्यया सह भारत २

अर्जुनउवाच हे राजन् तैने ननबुद्धिवाले तपकरणा वनवासकरणा
मानाहै इसमो राजाजनक वचन प्रमाण कियाहै कर्मणैवहि संसि।
द्धि मास्थिता जनकादय इसप्रकारके इतिहासका राजाजनकका अप
नी भार्याकेसाथ संवादका पुरातन कहतेहैं २

उत्सृज्य राज्यं भैक्षार्थं कृतबुद्धिं नरेश्वरं विदेहराज्य म
हिषी दुःखिता यदभाषत ३

विदेहराजा राज्यत्यागकरके वनमो एकधाना मुष्टिभोजनवाले नृ
पकरणेकी बुद्धिवालाभया उसकी भार्या राजा महिषी जो कहती
भई उसको तू श्रवणकरो ३

धनान्यपत्यं दारांश्च रत्नानि विविधानिच पंथानं पाव।
कं हित्वा जनको मौण्ड्यमास्थितः ४

विदेह राजाने धनको पुत्रोंको स्त्रियोंको नानाप्रकारके रत्नोंको त्या
गकिया स्वर्गमार्गका मुख्यमार्ग अग्निहोत्रकी अग्निको त्यागकिया
कर्ममार्गके मुण्डता धारणकीनी ४

नेदृशीं प्रियाभार्या भैक्षवृत्ति मकिंचनः धानामुष्टि
मुपासीनं निरीहं गत मत्सरम् ५

उसको प्राणप्रिया स्त्री भिक्षावृत्तिकरके अकिंचन देखा केवल
एकधाना मुष्टिको सेवनकर्ताहै निस्पृहभयाहै अभिमानरहितहै ५

समवाच समागम्य भर्तार मकुतोभयं क्रुद्धामनस्वि
नी भार्या विविक्ते हेतु महत्वः ६

उसकेपास भार्या प्राप्तहोकरके कहतीभई राजाकैसाहै अपनेको
सर्वत्यागकरके मुक्त और अभयमानताहै रानी क्रोधकरके एकान्त
प्राइकरके युक्तिपूर्वक वचनको कहतीभई ६

कथमुत्सृज्य राज्यंस्व धनधान्य समन्वितं कापाली वृ
त्ति मास्थाय धाना मुष्टिर्नतेवर: ७

भार्योवाच हे राजन् तू राज्यको कैसे त्यागकियाहै राज्यकैसाहै ध
नधान्य संयुक्तहै उसको त्यागकरके कपालीवृत्तिमानकरके धाना
मुष्टिको याचन करताहै परलोको अच्छीनहीहै ७

प्रतिज्ञाते न्यथाराज न्विचेष्टा चान्यथातव यद्राज्यं म
हदुत्सृज्य स्वल्पे तृप्यसि पार्थिव ८

तेरी त्याग प्रतिज्ञा अन्यथाहै और चेष्टा अन्यथाहै जो तैने राज्यत्याग
कियाहै भिक्षापात्रजोहै कपाल कुंडिकादिक उन्हको संग्रह सो तो
कावनाहै ८

श्री· रा· प· टी· ५०

50

नैतेन्ना तिथयो राजन् देवर्षि पितरस्तथा ग्रयणान्ता स्त्र
याभते मोक्षलेय परिश्रम: ९
ऐसी वृत्तिकरके अतिथि देवता पितर तृप्ति नही करेजाते यहतेरे तप
का श्रम निष्फलहै ९
देवता निथिभि श्चैव पितृभ्य श्चैव पार्थिव सर्वैरेन: प
रित्यक्त: परिव्रजसि निष्क्रिय: १०
जोको देवता त्यागहै अतिथि त्यागहै पितरोंका त्यागहै इन्हके त्याग
करके अकर्म होकरके तू संन्यास करताहै १०
यस्त्व त्रैविद्य वृद्धानां ब्राह्मणानां सहस्रश: भर्त्ता भूत्वाव
लोकस्य सोघते भृत्य मिच्छसि ११
जौतुमा वेदत्रयीके धर्मवृद्ध ब्राह्मणोंको पोषण अनेक सहस्रप्रकार
करणेहारा होकर अब उन्हसे पाप्ता भृष्टिकी जीवका चाहताहै ११
श्रियंहित्वा प्रदीप्तां त्व शत्रुत्स प्रतिवीक्षसे अपुत्रा जन
नी तेद्य कौसल्या वापतिस्तथा १२
अतिप्रकाशवाली संपदा त्यागकरके शत्रुकीन्याई परहस्तको देख
ताहै तेरीमाता कौसल्या अपुत्रा तेरेकरके भईहै कौसल्या जौनसे
हमारोनीहै सोभी तेरे करके पतिरहित होगयेहै १२
अमीव धर्म कामार्था त्वत्प्रिया: पर्युपासते त्वदाशा
मभिकांतन: कृपणा: फलहेतवा: १३
जौनसे धर्म अर्थ कामनाकी सफल कामनावास्ते क्षत्रीराजाभी
तोको सेवा करतेभये तेरीवांछाको आज्ञा करनेभये अतिदीन
ता फलसिद्धीवास्ते करतेभये १३
तास्त्वं विफलान्कुर्व कंतुलोके गमिष्यसि राजन्स।
शयते मोक्त परतं त्रेषु देहिषु १४
सभकी आशा विफलकरताहै ऐसीवृत्तिकरके कौन परलोकन
होहै गतिको कौनलोकको जावेगा मोक्ष सिद्धिको वांछाकरता
ताहै मोक्षसिद्धीव अदृष्टकर्मोके अधीन देहधारी जोवोंके
वनोहै १४
नैवतेस्ति परोलोको नापर: पापकर्मण: धर्मा
त्संगात्परित्यज्य यस्त्व मिच्छसि जीवितम् १५
ऐसे वृत्तिकरके तोको परलोक नहीहै ऐसे पापकर्मकरके यह

प्रमत्तलोकभी जौनसा तू यज्ञयागादिक धर्मदृष्टिकी धारारूप क
र्ममार्गको कपाली हैतिकैके जीविकाको वांछाकरताहै १५
हस्त्यो गंधान लंकारान् वासांसि विविधानिच किमर्थं म
निस त्यस्य परि व्रजसि निष्क्रियः १६
हे हरमाला सुगंधद्रव्य अनेक अलंकार भूषण अनेक प्रकारके व
स्त्रोंको त्यागकरकै निष्कर्म होकर क्यों संन्यासी होताहै १६
निधाने सर्व भूतानां भूतानं पावने महत् श्राद्धो वन
स्पति र्भूत्वा सोमांस्त्वं पर्युपाससे १७
तेंतो सर्वभूतोंकी रक्षा शांतिका महासमुद्र होकरकै सभको उभय
लोकोंकी पवित्रता कारण हाराहै और सर्वभूतोंका कल्पवृक्षहोक
कै और दीनजनोंको कपालधारकरकै क्यों सेवाकरताहै १७
खादिंते हरिणैर्मासैः क्रव्यादा बहवोप्यत बहवो क्रिम
यश्चैव किंपुनस्त्वा मनर्थकम् १८
हेराजन् जो अपने कर्मको त्यागकर वनविषे हस्तीरहताहै उसकोभी
मांसाहारी बहुत व्याघ्र मृग खालेतेहै और बहुत कृमीभी खालेतेहैं
ते जो अकिंचन अकर्मी अनर्थ करणेहारा तोको तेरे दोष क्यों नहीं
खावेंगे १८
यस्मा जुडिंको विष्या त्रिविष्ट धेवयोहरेत् वासश्चाप
हरेतस्मिं कथंते मानसं भवेत् १९
जोकोई जोव तेरे भिक्षापात्री भनदेवे तेरीत्रिदंडी यष्टिको हरले
वे तेरी चीरवस्त्रको हरलेजावे तो तेरे मन कैसे सोचकरेगा १९
यस्त्वयं सर्वमुत्सृज्य धानामुष्टे रनुग्रहः यद्दानेन समं
सर्वे किमिद मवसीयसे २०
जौनसात् सर्वत्यागकरके धानामुष्टिको ग्रहण करताहै जि-
सके दानकरकै सर्वलोक शांतिको पावताहै सो तूं क्या अव
क्या करताहै २०
धानामुष्टि रिहार्थश्च त्यतिलाते विनश्यति कावाहं
तव कोमंत कस्यते मप्यनु ग्रहः २१
हेराजन् तैने संन्यासवास्ते राज्य त्यागकियाहै तेरी त्यागप्रतिज्ञा
मिथ्याहै जो तैने धानामुष्टिका ग्रहण जीविकामानीहै वाहाय।
दार्थी जो है दंड कमंडल सोनहीत्यागे तो इंद्रियोंकी वासना त्यागभी
तोसैनहीबनता ऐसा मिथ्यात्याग जिसकाहै उसकोमरा मेंवैहै और

४९

51

सरनमानेकविप्रियवचनरघुकुलकैरवचंद

चौपाई

बाजहिंबाजनविविधविधाना पुरप्रमोदनहिंजाइबखाना
भरतआगमनसकलमनावहिं आवहिंवेगिनयनफलपावहिं
हाटबाटघरगलीअथाई कहहिंपरसपरलोकलकाई
कालिलगनभलकेतिकबारा पूजहिंविधिअभिलषहमारा
कनकसिंहासनसीयसमेता बैठहिंरामहिंहोइचितचेता
सकलकहहिंकबहोइहीकाली बिघनमनावहिंदेवकुचाली
तिनहिंसुहानअवधबधावा चोरहिंचांदनीरातिहिंभावा २=
शारदबोलीबिनयकबिकरही बारहिंबारपावलेपरही

दोहा

विपतिहमारिबिलोकीवडिमातकरियसोआजु
रामजाहिंबनराजतजिहोइसकलसुरकाजु ।

चौपाई

सुनिसुरबिनयठाढिपछिताती भयिउसरोजबिपिनहिमराती
देखिदेवपुनिकहहिंनिहोरी ॥ मातुतोहिनहिंथोरीउखोरी
बिस्मयहर्षरहितरघुराऊ तुमजानउरघुवीरसुभाऊ
जीवकर्मवशदुखसुखभागी जाइयअवधदेवहितलागी
बारबारगहिचरणसकोची चलीबिचारीबिबिधमतिपोची
ऊंचनिवासनीचकरतूती देखिनसकहिपराइबिभूती ॥
आगिलकाजबिचारिबिहोरी करिहैंचाहकुशलकविमोरी
हरषिहृदयदशरथपुरआई जनुग्रहदशादुःसहदुखदाई

दोहा

नाममंथरामंदमतिचेरिकैकयीकेरि ॥
अयशपिटारीमासुकरगईगिरामतिफेरी

चौपाई

देखिमंथरानगरबनावा मंगलमंजुलबाजवधावा ॥
पूछेसिलोगनकाहउछाहू रामतिलकसुनिभाउरदाहू
करैबिचारकुबुद्धिकुजाती होइअकाजकवनबिधिराती
देखिलागमधुकुटिलकिराती जिमिगवनतकैलेउकेहिभांती
भरतमातपहिंगइबिलखानी काहअनमनीविहंसिकहरानी

उत्रनदेईनलेईउसाँसू   नारिचरितकरिढारतिआँसू
हसिकहरानीगालवडतोरे   दीन्हलषनशिषअसमनमोरे
तवहूनवोलिचेरिवडिपापिनी   छाडेस्वासकारिजनुसांपिनी

दोहा

सभयरानिकहकहसिकिनकुशलराममहिपाल
भरतलषनरिपुदवनसुनिभाकुवरीउरछाल ॥

चौपाई

कतशिषदेईहमहिकोउमाई   भालकरवकेहिकरवलपाई
रामहिछाडिकुशलकेहिआजू   जाहिनरेशदेईयुवराजू
भयउकौशल्यहिविधिअतिदाहिन   देषतगर्वरहतउरनाहिन
देषहुकसनजाइसवशोभा   जोअवलोकिमोरमनछोभा
सुतविदेशनशोचतुम्हारे   जानहौवशनाहहमारे
नीदवहुतप्रियसेजतुराई   लषहुनभूपकपटचतुराई
सुनिप्रियवचनकुटिलमनजानी   झुकीरानीअवजुअरगानी
पुनिअसकवहुँकहसिघरफोरी   तौधरिजीभकढावौतोरी

दोहा

कानेषोरेकूवरेकुटिलकुचालीजानि ॥
तियविशेषिपुनिचेरिकहिभरतमातमुसकानि

चौपाई

प्रियवादिनिसिषदीन्हउतोहि   सपनेहुँतोपरकोपनमोही
सुदिनसुमंगलदायकसोई   तोरकहाफुरजादिनहोई
जेठस्वामिसेवकलघुभाई   यहदिनकरकुलरीतिसुहाई
रामतिलकजोसांचेहुकाली   मांगुदेउमनभावतआली
कौशिल्यासमसवमहतारी   रामहिसहजसुभावपियारी
मोपरकरहिसनेहुविशेषी   मैकरीप्रीतिपरीक्षादेषी
जोविधिजन्मदेईकरिछोहू   हौंहपिरामसियसुतपतोहू
प्राणतेअधिकरामप्रियमोरे   तिनकेतिलकछोभककसतोरे

दोहा

भरतसपथतोहिसत्यकहुँपरिहरकपटदुराव
हर्षसमयविस्मयकरसिकारणमोहिसुनाव।

चौपाई

एकहिवारआशासवपूजी   अवकछुकहवजीहकरदूजी
फोरैयोगकपारअभागा   भलोकहतदुषरोरहुलागा

११२

